CARNEGIE INDIA

WORKING PAPER

मार्च २०२१

गलवान से आगे का रास्ता : भारत-चीन संबंधों का भविष्य

विजय गोखले

CARNEGIE ENDOWMENT FOR INTERNATIONAL PEACE

गलवान से आगे का रास्ता : भारत-चीन संबंधों का भविष्य

विजय गोखले

इस वर्किंग पेपर का हिंदी में अनुवाद धीरज कुमार ने किया है।

© 2021 Carnegie Endowment for International Peace. All rights reserved.

Carnegie does not take institutional positions on public policy issues; the views represented herein are those of the author(s) and do not necessarily reflect the views of Carnegie, its staff, or its trustees.

No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means without permission in writing from Carnegie India or the Carnegie Endowment for International Peace. Please direct inquiries to:

Carnegie Endowment for International Peace
Publications Department
1779 Massachusetts Avenue NW Washington, D.C. 20036
P: + 1 202 483 7600
F: + 1 202 483 1840
CarnegieEndowment.org

Carnegie India
Unit C-5 & C-6, Edenpark,
Shaheed Jeet Singh Marg
New Delhi - 110016, India
P: + 011 4008687
CarnegieIndia.org

This publication can be downloaded at no cost at CarnegieIndia.org.

विषय सूची

सारांश	1
भूमिका	3
भारत-चीन संबंधों की एक संक्षिप्त पृष्ठभूमि	3
चीन और भारत की बदलती विदेश नीतियां	5
चीन और भारत में नया नेतृत्व	9
भारत-चीन-अमेरिका त्रिकोण	12
गलवान से आगे का रास्ता	15
निष्कर्ष	16
लेखक का परिचय	18
नोट्स	19

सारांश

१५ जून २०२० को भारत और चीन के सैनिकों के बीच एक हिंसक झड़प हुई जिसमें बीस भारतीय सैनिक मारे गए जबकि चीन के कितने सैनिक मारे गए, ये बात सामने नहीं आई। वास्तविक नियंत्रण रेखा पर दोनों सेनाओं के बीच यह भिड़ंत गलवान नदी के साथ उस व्यापक सीमा गतिरोध का हिस्सा है जिसे अभी तक सुलझाया नहीं जा सका है। भारतीय कूटनीतिक समुदाय मोटे तौर पर इस बात पर सहमत है कि यह सीमा विवाद भारत-चीन रिश्तों में एक गंभीर गिरावट को दिखाता है। उनकी दलील है कि पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की १९८८ में बीजिंग यात्रा के बाद दोनों देशों के रिश्तों की जो बुनियाद बनी थी, वो अगर टूटी नहीं है तो भी हिल तो ज़रूर गई है। सवाल हैं कि दोनों देश अपने रिश्तों के इस निचले स्तर पर कैसे पहुंचे, और गलवान की भिड़ंत भारत- चीन संबंधों के भविष्य के लिए क्या दर्शाती है?

इस पेपर में कहा गया है कि, वर्तमान सीमा विवाद होने के काफी पहले से, एक-दूसरे के प्रति बड़े पैमाने पर गलतफहमियों और उससे पैदा हुई भरोसे की कमी की वजह से भारत-चीन संबंधों में लगातार गिरावट आ रही थी। दोनों देशों के बीच गलतफहमी की सबसे बड़ी बुनियाद एक-दूसरे की अंतरराष्ट्रीय महत्वाकांक्षाओं को समझने में नाकामी है, जिससे इस डर को बढ़ावा मिलता है कि उनकी विदेश नीतियां दूसरे देश को निशाना बनाकर तय की जाती हैं। इस पेपर में गलवान विवाद के बाद भारत-चीन रिश्तों के भविष्य पर विचार करने के पहले तीन अलग-अलग चरणों के माध्यम से दोनों देशों के रिश्तों पर इन गलतफहमियों के असर और उनमें आए बदलाव का पता लगाया गया है।

पहला चरण है २००८ वित्तीय संकट के तुरंत बाद की अवधि, जब चीन ने अपनी बढ़ती वैश्विक महत्वाकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए अपनी विदेश नीति को फिर से गढ़ा। जब चीन ने अपनी वैश्विक भूमिका का विस्तार किया, उसने भारत पर इसके प्रभावों के बारे में नहीं सोचा। नतीजा यह हुआ कि नई दिल्ली में उसकी नई विदेश नीति का स्वागत नहीं किया गया, और यह डर पैदा हो गया कि चीन भारत के हितों को नुकसान पहुंचाने की कोशिश कर रहा है। इन नीतियों के नई दिल्ली के विरोध ने बीजिंग में एक विरोधपूर्ण प्रतिक्रिया को बढ़ावा दिया, जो समझ नहीं पाया था कि कैसे उसकी नई विदेश नीति भारत के अंतरराष्ट्रीय हितों पर असर डाल रही है। यही पहला संकेत था कि किस तरह दोनों देशों के बीच गलतफहमियां बढ़ रही हैं और एक-दूसरे पर भरोसे की कमी भारत-चीन रिश्तों की विशेषता बनती जा रही है।

दूसरे चरण में बीजिंग और नई दिल्ली में नए नेतृत्व का वर्णन किया गया है और यह बताया गया है कि कैसे इस बदलाव ने एक-दूसरे की विदेश नीति को लेकर आपसी संदेहों को और बढ़ाया। जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारतीय विदेश नीति को एक नई दिशा दी, चीन की यह धारणा और मज़बूत हो गई कि नई दिल्ली चीन को रोकने की कोशिश कर रही है। मज़बूत भारत-चीन संबंधों पर ज़ोर देने की पिछली सरकार की नीति को जारी रखने की मोदी सरकार की इच्छा के बावजूद, पड़ोसी देशों को प्राथमिकता देने की नीति (नेबरहुड फर्स्ट पॉलिसी) और अमेरिका के साथ करीबी रिश्तों को चीन में नकारात्मक तौर पर देखा गया। इन धारणाओं से मेल खाती थी भारत के मुकाबले चीन की बढ़ती आक्रामकता, जिसका प्रतीक था डोकलाम में २०१७ का सीमा गतिरोध और हिंद महासागर में चीन की बढ़ती नौसैनिक गतिविधि। इन हरकतों ने नई दिल्ली को भरोसा दिला दिया कि उसकी कोशिशों के बावजूद, चीन भारत के अंतरराष्ट्रीय हितों के प्रति संवेदनशील नहीं है, और साथ में चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग की सरकार की नकारात्मक छवि भी बनने लगी। इस तरह, २०१८ तक, गलतफहमी और अविश्वास ने भारत-चीन संबंधों को पूरी तरह अपनी चपेट में ले लिया।

इस हालात के सबसे बड़े सबूतों में एक भारत-प्रशांत क्षेत्र को लेकर चीन और भारत के रुख में दिखा था, जो इस पेपर का आखिरी चरण है। इस मामले में, बीजिंग के नीति-निर्माताओं ने भारत-प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका और भारत के सहयोग पर तीखी प्रतिक्रिया दी, और इसे "नियंत्रण" की संज्ञा दी। तेज़ी से उभरती अंतरराष्ट्रीय शक्ति के रूप में भारत की अपनी हैसियत बनाने और नतीजतन हिंद महासागर क्षेत्र में भारत के बढ़ते प्रभाव को चीन ने स्वीकार नहीं किया। बल्कि, हिंद महासागर क्षेत्र में इन गतिविधियों का इस्तेमाल चीन ने अपने नौसैनिक विस्तार को सही ठहराने के लिए किया। चीन अब इसे ज़रूरी मानने लगा है क्योंकि उसकी धारणा है कि अमेरिका और उसके सहयोगी देश चीन की समुद्री हैसियत पर काबू पाने की कोशिश कर रहे हैं।

ये खंड बताते हैं कि किस हद तक दोनों पक्षों ने दूसरे की अंतरराष्ट्रीय स्थिति की गलत व्याख्या की है, जिससे भारत-चीन संबंधों में अविश्वास की भावना पैदा हुई है। इसका नतीजा है कि दोनों देशों के रिश्ते १९६२ युद्ध के बाद अपने सबसे निचले स्तर पर पहुंच गए हैं। सशस्त्र सह-अस्तित्व की ऐसी स्थिति बनी रह सकती है, और शायद चरम परिस्थिति में सशस्त्र टकराव में भी बदल सकती है। हालांकि, अगर दोनों देश रिश्तों में आ गए अविश्वास को दूर करने की कोशिश करते हैं और एक-दूसरे की अंतरराष्ट्रीय स्थिति के लिए बेहतर समझ विकसित करते हैं, तब इससे भारत-चीन प्रतिद्वंद्विता के साथ-साथ एक हद तक सहयोग की स्थिति बन सकती है। इस संदर्भ में, चीन को समझना होगा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अमेरिका को हटाकर उसकी जगह लेने का लक्ष्य पाने के लिए, चीन को भारत के साथ घनिष्ठता को बढ़ावा देने का पहला कदम उठाना चाहिए। ऐसी प्रक्रिया आसान नहीं होगी, और इसके लिए भारत-चीन संबंधों की अब तक की विशेषताओं को पूरी तरह भूलना होगा।

भूमिका

१५ जून २०२० को वास्तविक नियंत्रण रेखा के नज़दीक एक हिंसक झड़प में बीस भारतीय सैनिकों और अज्ञात संख्या में चीनी सैनिकों की मौत एशिया के दो सबसे बड़े आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के सत्तर साल के रिश्तों का टर्निंग प्वॉइंट है।[1] दोनों पक्षों के विशेषज्ञ इस विचार से सहमत हैं। ब्रह्मा चेलानी ने इसे भारत-चीन संबंधों में "टिपिंग प्वॉइंट" (ऐसी स्थिति जहां छोटी घटनाएं बड़े बदलाव लाती हैं) कहा है,[2] जबकि हू शिशेंग इसे "१९६२ के सीमा युद्ध के बाद सबसे निचला बिंदु"[3] कहते हैं। दोनों पक्ष इस हालात के लिए एक-दूसरे को जिम्मेदार मानते हैं। पूर्व राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार शिवशंकर मेनन के मुताबिक लद्दाख में जो हुआ वो "चीन के व्यवहार में एक मौलिक और महत्वपूर्ण बदलाव" है जबकि हू का दावा है कि यह भारत सरकार है जिसने "चीन के प्रति सख्त कार्रवाई की कोशिशों को बढ़ाया है।"[4]

भारतीय दृष्टिकोण से, पूर्वी लद्दाख में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर चीन की ताज़ा हरकतों ने उस सीमा प्रबंधन ढांचे को खंडित कर दिया है जो दोनों पक्षों ने १९९३ के बाद बनाया है और भारत-चीन के रिश्तों को गंभीर नुकसान पहुंचाया है।[5] गलतफहमियां गहराती दिख रही हैं, और मतभेद की जड़ है भरोसे का अभाव। इस पेपर में भारत और चीन के बीच रिश्तों में आ रहे बदलावों पर नज़र डाली गई है ताकि उन वजहों को समझा जा सके जो रिश्तों में गिरावट ला रहे हैं।

यह पेपर मानता है कि दोनों देशों के बीच गहराते अविश्वास का कारण वैश्विक संबंधों के बड़े संदर्भ में एक-दूसरे के प्रति उनकी धारणाओं और अपेक्षाओं में है। दोनों देश स्वयं को शक्तिशाली सभ्यताओं के रूप में देखते हैं और दूसरे से अपेक्षा रखते हैं कि वो इस तथ्य को स्वीकार करे। गलतफहमियों की वजह से अक्सर एक देश दूसरे देश के कृत्यों और व्यवहार पर गलत इरादों से प्रेरित होने का आरोप मढ़ता है जो शायद दूसरे देश का इरादा ना रहा हो, लेकिन इससे अविश्वास पैदा होता है। इसलिए भविष्य में, दोनों पक्षों को चिंता के व्यक्तिगत मुद्दों से निपटने के पहले एक-दूसरे के प्रति अपनी बुनियादी धारणाओं पर फिर से काम करने और एक नए दृष्टिकोण पर पहुंचने की ज़रूरत हो सकती है। इस विश्लेषण में मुख्य रूप से भारतीय और चीनी विद्वानों के लेखन का उपयोग किया गया है। पश्चिमी स्रोतों को जानबूझकर बाहर रखा गया है (सिवाय कुछ लेखों के जिन्हें किसी भारतीय लेखक ने मिलकर लिखा है)। इसका उद्देश्य ये समझना है कि भारत-चीन संबंधों को दोनों पक्ष खुद किस तरह देखते हैं।

यह पेपर इस मुद्दे को तीन तरह के नज़रिए से देखता है। पहला है विदेश नीति में उन बदलावों का विश्लेषण जो भारत और चीन में २००८ के बाद आए और किस हद तक भारत और चीन उन बदलावों की वजह थे। दूसरा नज़रिया है उन धारणाओं का विश्लेषण जो दोनों देशों में एक-दूसरे के प्रति है और इस प्रक्रिया में मौजूदा सरकारों की क्या भूमिका है। तीसरा और अंतिम नज़रिया है भारत, चीन, और अमेरिका के बीच भारत-प्रशांत क्षेत्र में उभरती हुई प्रतिस्पर्धा। इस संबंध का मूल्यांकन करने के कई और दृष्टिकोण हो सकते हैं, जैसे पाकिस्तान के साथ चीन का गठजोड़, लेकिन ऐसा लगता है कि पुराने मुद्दों का महत्व कम है। एक-दूसरे की भू-राजनैतिक आकांक्षाओं को लेकर दोनों देशों की जो धारणाएं हैं, उसी से ज़्यादा मुश्किल मुद्दे निकलते दिखते हैं।

भारत-चीन संबंधों की एक संक्षिप्त पृष्ठभूमि

दिसंबर १९८८ में राजीव गांधी की चीन यात्रा भारत-चीन संबंधों मे एक नए दौर की शुरुआत थी। यह आधारभूत नीतिगत बदलावों का कारण बनी। पहला बदलाव, भारत और चीन दोनों सहमत हुए कि उनके संबंध पूरी तरह सामान्य बनाए जाएंगे और सीमा विवाद का समाधान पहले करने की शर्त पर अब निर्भर नहीं रहेंगे। दूसरा, दोनों देशों ने वास्तविक नियंत्रण रेखा पर शांति बनाए रखने का समझौता किया और इस दौरान एक अंतिम समाधान पर काम करने का निश्चय किया जो उचित, निष्पक्ष और दोनों पक्षों को स्वीकार्य होगा। तीसरा बदलाव, दोनों ने वैश्विक शांति और उन्नति को बनाए रखने में एक-दूसरे के वैध योगदान को स्वीकार किया।[6] भारतीय हलकों में इसे मोटे तौर पर राजीव गांधी- देंग शियाओपिंग अस्थायी समझौता (Rajiv Gandhi–Deng Xiaoping modus vivendi) कहा जाने लगा।

१९८० के दशक की शुरुआत में, भारत ने बीजिंग के साथ रिश्ते सुधारने की संभावनाओं को गुप्त रूप से तलाशना शुरू कर दिया था।[7] हालांकि, १९८० के दशक के उत्तरार्ध तक, कुछ नई चीज़ें सामने आ गईं। ऐसी ही एक नई चीज़ थी १९८६—१९८७ में वास्तविक नियंत्रण रेखा के पास सुमदोरोंग चू घाटी में चीन के साथ सैन्य मुठभेड़ (इसे वांगडुंग की घटना के रूप में जाना जाता है)।[8] फरवरी १९८७ में अपने उत्तर-पूर्वी इलाके में अरुणाचल प्रदेश को राज्य का दर्जा देने के भारत के फैसले ने भारत और चीन के बीच तनाव को और बढ़ा दिया।[9] तनाव बढ़ाने की एक और वजह थी सोवियत संघ के पूर्व राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव के शासनकाल में चीन-सोवियत संघ के रिश्तों का सामान्य होते जाना और साथ में पश्चिमी देशों के साथ चीन के रिश्तों को सामान्य बनाने की चल रही प्रक्रिया।[10] ऐसा माना जा रहा था कि १९८९ में आम चुनाव नजदीक होने और बोफोर्स तोप सौदे में भ्रष्टाचार के आरोपों की वजह से भारत (सरकार) को अपनी विदेश नीति में एक कामयाबी हासिल करने की ज़रूरत थी।[11]

भारत की धारणा थी कि चीन में पूर्व सर्वोच्च नेता देंग शियाओपिंग के रूप में एक स्थिर और व्यावहारिक चीनी नेतृत्व था, जिसने भारत के तत्कालीन विदेश मंत्री और बाद में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी और उस समय की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से संपर्क किया था।[12] भारत की उम्मीद थी कि इसका मतलब है चीन वास्तव में सीमा समझौते के लिए ज़्यादा खुलापन दिखाएगा, विश्वास बढ़ाने वाले उपायों के ज़रिए शांति स्थापित करना चाहेगा, भारत की क्षेत्रीय अखंडता के प्रति अधिक सम्मान दिखाएगा, और बेहतर भारत-चीन संबंधों के माध्यम से चीन-पाकिस्तान साझेदारी को नरम बनाएगा।[13] इन उद्देश्यों को हासिल करने के लिए, चीन के साथ भारतीय संबंधों में अन्य बातों के अलावा जो चीज़ें शामिल थीं, वो थीं- बेवजह बयानबाज़ी में कटौती, शिखर स्तर की और दूसरी राजनीतिक वार्ताओं की बहाली, व्यापार और वाणिज्यिक संबंधों को फिर से बहाल करना, दोनों देशों के लोगों के आपस में मिलने-जुलने पर लगी रोक में ढिलाई देना, सीमावर्ती इलाकों में विश्वास बहाल करने वाले उपाय करना, सैन्य संबंधों को सामान्य बनाना, और बहुपक्षीय क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाना।

आने वाले सालों में भारत के दृष्टिकोण से सकारात्मक या अनुकूल परिणाम सामने आए। जैसे, नेता-स्तरीय बातचीत फिर से शुरू होना, सिक्किम को भारत के अंग के रूप में चीन की औपचारिक स्वीकृति, १९९३ और १९९६ में महत्वपूर्ण शांति समझौते, २००५ में भारत-चीन सीमा प्रश्नों के समाधान के लिए राजनीतिक मापदंडों और मार्गदर्शक सिद्धांतों पर समझौता, उत्तरपूर्वी भारत और आसपास के इलाकों में सक्रिय विद्रोही समूहों को समर्थन में कमी, और कारोबार में बढ़ोतरी।[14] हालांकि, चीन ज़मीनी सच्चाई के आधार पर सीमा के प्रश्न को सुलझाने का इच्छुक नहीं था। चीन ने २००३ में वास्तविक नियंत्रण रेखा के स्पष्टीकरण अभ्यास को भी रोक दिया; साल २००० के बाद वास्तविक नियंत्रण रेखा के पास और तिब्बत में तेज़ी से बुनियादी सुविधाएं बनाने के चीन के कदमों के बाद चिंता होने लगी; जम्मू और कश्मीर के मुद्दे पर अपने रवैये में चीन ने कोई बुनियादी बदलाव नहीं किया, और पाकिस्तान को घातक हथियारों की बिक्री उसी तेज़ी से जारी रही।[15] २००० के दशक के मध्य तक, व्यापार असंतुलन का बिगड़ता जाना भी समस्या को जन्म दे रहा था।

चीन ने शायद ये सोच लिया होगा कि वो पूर्वी सेक्टर में अपनी शर्तों पर सीमा समझौता कर सकता है, कि भारत धीरे-धीरे तिब्बती शरणार्थी समुदाय की गतिविधियों पर सख्ती से रोक लगा देगा (जैसा नेपाल ने किया), कि भारतीय बाज़ार चीन के सामानों के लिए खुल जाएंगे, कि चीन के दक्षिण-पश्चिमी सीमा पर सुरक्षा मुद्दों के प्रति भारत संवेदनशील रहेगा और बहुपक्षीय मंचों पर चीन का समर्थन करता रहेगा, और कि भारत के साथ उसके संबंध पाकिस्तान के साथ उसके संबंध से स्वतंत्र रहेंगे भले ही भारत-पाकिस्तान के आपसी संबंध कैसे भी हों और वो दूसरे दक्षिण एशियाई देशों के साथ आसान शर्तों पर समझौता कर सकेगा।[16] वास्तविक नियंत्रण रेखा पर शांति से चीन को अधिक सुरक्षा महसूस हुई और उसे भारत की गंभीर आपत्तियों के बगैर बुनियादी सुविधाएं विकसित करने की इजाज़त मिल गई; भारतीय बाज़ार खोल दिया गया था, और चीन भारत के सबसे बड़े व्यापारिक साझीदारों में एक बन गया; तिब्बत को चीन का अंग मानने को भारत की मंजूरी की दिशा में लगातार प्रगति हुई; और चीन ने हथियारों की बिक्री समेत कई और माध्यमों से दक्षिण एशिया में पर्याप्त पैठ बना ली।[17] सीमा विवाद के जल्दी समाधान की चीन सरकार की उम्मीदें गलत साबित हो रही थीं; तिब्बत मुद्दे पर उनकी उम्मीदें शायद पूरी नहीं हुई थीं; उन्होंने सोचा कि भारत में लगातार ज़ोर पकड़ रहे 'खतरनाक चीन' के सिद्धांत को आधिकारिक रूप से प्रोत्साहन दिया जा रहा था; और 2008 के बाद से अमेरिका के साथ भारत के रिश्तों का नए सिरे से गढ़ा जाना उसके लिए चिंता की बात थी।

१९९० के दशक के मध्य में भारत में चीन के राजदूत चेंग रुईशेंग दोनों देशों के रिश्तों को इस तरह संक्षेप में समझाते हैं: "रिश्तों में तेज़ी से सुधार के बावजूद आपसी भरोसे की कमी बरकरार है।"[18] अस्थायी समझौते (Modus Vivendi) के दो दशकों के बाद भारत के बारे में चीनी सोच के दो पहलू दिखाई देते हैं – एक विचारधारा ने स्वीकार किया कि भारत की आर्थिक, वैज्ञानिक और सैन्य क्षमताएं भी बढ़ रही थीं, हालांकि चीन की तरह तेज़ी से नहीं।[19] दूसरी तरफ, कई चीनी नेताओं का रवैया एक प्रमुख शक्ति होने के भारत के दावों को खारिज करने वाला था, वे इन दावों को अवास्तविक और दिखावटी मानते थे।[20] दोनों देश एक-दूसरे की सफलताओं को लेकर अनिश्चितता में थे और एक-दूसरे की महत्वाकांक्षाओं को लेकर सतर्क लेकिन साथ ही इस बात को लेकर होशियार भी थे कि नई सदी में, बाकी दुनिया की तुलना में दोनों देश ऊपर उठेंगे। दोनों देशों की व्यापक राष्ट्रीय शक्ति में आ रहे तुलनात्मक अंतर की वजह से अस्थायी समझौता पहले से दबाव में था, लेकिन दोनों ही पक्षों के ज़्यादातर विश्लेषक भविष्य को लेकर निराशावादी नहीं दिखते थे भले ही रिश्तों के ऊपर अब भी अविश्वास की तलवार लटकी हुई थी।[21]

चीन और भारत की बदलती विदेश नीतियां

भारत और चीन दोनों ने १९९० के दशक में आर्थिक तरक्की देखी। नतीजतन, इससे इक्कीसवीं सदी की शुरुआत में उनका प्रभाव बढ़ा और इसका असर उनकी बदलती विदेश नीतियों में झलकने लगा। क्या अपनी विदेश नीतियों को नई शक्ल देने की प्रक्रिया का कोई असर भारत-चीन संबंधों के भविष्य पर पड़ा था?

चीन की बदलती विदेश नीति

वांग जिसी और यान ज़ुएतोंग जैसे विद्वान कहते हैं कि २००८— २००९ तक घरेलू और अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों की वजह से देंग की "ताओ गुआंग यांग हुई यानी देखो और इंतज़ार करो" की विदेश नीति की समीक्षा की ज़रूरत महसूस होने लगी थी।[22] चीन की अर्थव्यवस्था और साथ में इसकी राष्ट्रीय शक्ति में तो काफी बढ़ोतरी हो ही चुकी थी, इसके अलावा बाज़ारों और संसाधनों के लिए चीन की पहुंच ने वैश्विक मामलों में ज़्यादा भागीदारी के लिए दबाव बढ़ा दिया था।[23] चीन में लगभग एकमत दृष्टिकोण है कि वैश्विक वित्तीय संकट ने पश्चिमी देशों की कमज़ोरियों को उजागर किया और चीन के उदय के लिए जगह बना दी।[24] तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की एशिया में नए संतुलन की नीति, दक्षिणी चीन सागर में वियतनाम और फिलिपींस के साथ चीन के विवाद और सेनकाकु (या डियाओउ) टापुओं के मुद्दे पर जापान के साथ विवाद भी ऐसी वजहें थीं जिन्होंने विदेश नीति की समीक्षा की ज़रूरत महसूस कराई।[25] ताओ गुआंग यांग हुई एक अधिक "प्रो-एक्टिव" विदेश नीति में रुकावट डाल रहा था, या, जैसा कि कुछ चीनी विद्वान कहते हैं, "बीजिंग के लिए यह तर्कसंगत नहीं था कि ताओ गुआंग यांग हुई पर ज़ोर डाला जाए जबकि व्यावहारिकता में नीति कुछ और चल रही थी।"[26] यान के मुताबिक, देंग की ताओ गुआंग यांग हुई की रणनीति का उद्देश्य चीन को आर्थिक रूप से समृद्ध करना और सांस्कृतिक क्रांति के दौरान खोए हुए समय की भरपाई करना था। इसके लिए चीन को ज़रूरत थी कि आर्थिक विकास को ध्यान में रखते हुए अपने दीर्घकालिक हितों का स्तर ऊंचा किया जाए। चीन ने किसी भी चीज़ का नेतृत्व करने की भूमिका से परहेज़ किया था और अपने हर विदेश नीति लक्ष्य से ऊपर प्राथमिकता अमेरिका के साथ अपने रिश्तों को दी थी।[27] चीन को अब एक देश-आधारित विदेश नीति से हटकर मुद्दों पर आधारित विदेश नीति पर जाने की ज़रूरत थी और वैश्विक घटनाओं के प्रति निष्क्रिय रवैया छोड़कर ऐसे सक्रिय दृष्टिकोण की ज़रूरत थी जो वैश्विक माहौल को आकार दे।[28] उद्देश्य था चीन की विदेश नीति के लिए एक नया संगठन सिद्धांत ढूंढ़ना।[29]

इस नए दृष्टिकोण को दर्शाता था वाक्यांश फेन फा यू वेई यानी "उपलब्धि के लिए प्रयास।" यह सुझाया गया था कि चीनी विदेश नीति का फोकस आपसी विश्वास के आधार पर रिश्ते बनाने के बजाय साझा हितों के आधार पर रिश्ते बनाने पर होना चाहिए और चीन को पहले के दौर की तुलना में पड़ोस को बराबर प्राथमिकता देनी चाहिए जब इसने अपनी विदेश नीति में अमेरिका को गौरवशाली स्थान दिया था।[30] इस बौद्धिक मंथन के नतीजे तब सामने आए जब शी ने राष्ट्रपति पद ग्रहण किया और अक्टूबर २०१३ में पड़ोसी देशों के साथ कूटनीतिक कार्य पर एक सम्मेलन आयोजित किया। उन्होंने ऐलान किया कि पड़ोसी देशों के साथ कूटनीतिक कार्यों में अच्छा करना 'दूसरी शताब्दी' के लक्ष्यों को प्राप्त करने और चीनी राष्ट्र के

महान कायाकल्प को हासिल करने की ज़रूरत से आया है। चीन को पड़ोसी देशों के साथ कूटनीति को आगे बढ़ाने के लिए कड़ी मेहनत करने की ज़रूरत है, साथ ही चीन को अपने विकास के लिए चारों तरफ मज़बूत माहौल बनाने की कोशिश करनी चाहिए और पड़ोसी देशों को सक्षम बनाना चाहिए कि वे साझा विकास के उद्देश्य के लिए चीन के विकास से ज़्यादा फायदे उठाएं।[31]

इस भाषण को चीन के मार्गदर्शक सिद्धांतों और विदेश नीति के लक्ष्यों में एक जबरदस्त बदलाव का संकेत माना गया।[32] यान ने लिखा कि फेन फा यू वेई का यह नया संगठन सिद्धांत अब केवल पैसा बनाने के मकसद से नहीं बल्कि दोस्त बनाने और साझा हितों पर आधारित रणनीतिक विश्वसनीयता बनाकर पड़ोस में नेतृत्व क्षमता दिखाने के मकसद से आया था – यानी, चीन के आर्थिक फायदों को बांटकर और चीन की तरक्की से आसपास के इलाकों को फलने-फूलने का मौका देकर।[33]

हालांकि, चीन की विदेश नीति के लिए यह सवाल महत्वपूर्ण बना रहा कि वो अमेरिका के साथ कैसे व्यवहार करेगा।[34] अमेरिका की तत्कालीन विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन ने बयान दिया था कि अमेरिका रणनीतिक उद्देश्य के रूप में एशिया के लिए धुरी है और चीन ने इस बयान को इस तरह देखा कि अमेरिका एशिया-प्रशांत क्षेत्र में चीन की भू-रणनीतिक समानता को नकारने का इरादा रखता है।[35] चीन ने इस क्षेत्र में अमेरिकी कदमों पर गहरी चिंता दिखाई, ना केवल अमेरिका के गठबंधन सहयोगियों के संदर्भ में, बल्कि भारत समेत दूसरे देशों के साथ नए संबंधों के निर्माण में भी, जिनसे चीन पर नियंत्रण का संकेत मिलता था।[36] कुछ चीनी विश्लेषकों का मानना है कि चीन के लिए यही क्षेत्रीय माहौल को आकार देने और ज़्यादा मुखर होने की वजह थी, हालांकि रक्षात्मक और रचनात्मक तरीके से।[37]

सवाल ये है कि क्या चीन की विदेश नीति को नए सिरे से गढ़ने में भारत एक वजह था, और अगर हां तो कितनी बड़ी वजह था। इससे हमें इस बात का पता चलता है कि चीन भारत को किस नज़रिए से देखता था। चीनी शोध में, भारत का वर्णन नियमित रूप से एक महत्वपूर्ण पड़ोसी और एक विकासशील देश के रूप में होता है। चीनी विद्वान बहुपक्षीय मामलों में साझा हितों और एक समय पर दोनों देशों के उदय की घटना के बारे में बोलते रहे हैं।[38] ऐसा तब भी था जब भारत और चीन वैश्विक मुद्दों पर एक साथ आगे बढ़ते हुए दिखाई दिए, जैसे जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर और रूस-भारत-चीन त्रिपक्षीय समूह और ब्रिक्स ग्रुप (जिसमें ब्राज़ील और दक्षिण अफ्रीका भी शामिल हैं) के माध्यम से। चीनी विद्वानों ने इस बात का जिक्र भी किया है कि भारत और चीन के बीच रणनीतिक अंतर्विरोध नहीं हैं, हालांकि ये माना गया कि कुछ द्विपक्षीय मुद्दों पर गंभीर मतभेद हैं।[39] फिर भी चीन की विदेश नीति की नई दिशा के ऊपर बहस में भारत का शायद ही कोई जिक्र दिखता है। इस दौर के सभी चीनी लेखन में अमेरिका, चीन, और रूस का जिक्र लगातार बड़ी ताकतों के तौर पर किया जाता है, और इसी वर्ग में कभी-कभी जापान और यूरोपीय यूनियन का जिक्र भी होता है, लेकिन भारत का शायद ही कभी उल्लेख होता है।[40] शायद वैश्विक नीति के बड़े संदर्भ में चीन ने भारत को रणनीतिक चिंता का विषय नहीं माना। और ना ही चीन ने अपनी विदेश नीति की मुख्य रणनीतिक चुनौती- यानी अमेरिका से निपटने के लिए भारत को महत्वपूर्ण भागीदार समझा। यह संभव है कि चीन ने निष्कर्ष निकाला कि भारत के पास विश्व में चीन के उदय में मदद करने या बाधा डालने की क्षमता नहीं है। इससे इस बात का जवाब भी मिलता है कि क्यों चीन ने भारत की प्रासंगिकता को केवल चीन की परिधि के संदर्भ में या उन बहुपक्षीय मामलों में समझी, जहां दोनों को विकासशील देश और उभरती अर्थव्यवस्थाएं माना जाता था।[41] ऐसा लगता है कि बीजिंग ने यह भी मान लिया था कि भारत चीन के वैश्विक दृष्टिकोण पर गंभीरता से आपत्ति नहीं जता सकता है, और व्यक्तिगत चिंताओं से द्विपक्षीय रूप से निपटा जा सकता है।

हालांकि चीन ने भारत को अपनी तरक्की के लिए ना तो सहयोगी समझा और ना खतरा, लेकिन "उपलब्धि के लिए प्रयास" की संशोधित चीनी विदेश नीति का बड़ा असर भारत पर होना था। एक बड़ा नतीजा था चीन का अपने पड़ोस में आर्थिक फायदों का विस्तार करना ताकि साझा हितों का निर्माण हो और रणनीतिक विश्वसनीयता कायम हो। इसने अंततः बेल्ट एंड रोड इनीशिएटिव (बीआरआई) का रूप लिया जिसने भारत के एक महत्वपूर्ण तत्व पर असर डाला और भारत की एक मुख्य चिंता की वजह बना। महत्वपूर्ण तत्व था दक्षिण एशिया में भारत का पारंपरिक और ऐतिहासिक प्रभाव, और मुख्य चिंता थी जम्मू और कश्मीर पर भारत की संप्रभुता।[42] बीआरआई पर चीन और भारत के बीच कोई सलाह-मशविरा नहीं हुआ था। शायद चीनियों ने मान लिया था कि भारत साथ आ जाएगा और अपनी योजनाओं को बीआरआई के साथ जोड़ देगा।[43] इसके अलावा, जब चीन ने चीन पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर (सीपीईसी) को एक फ्लैगशिप प्रोजेक्ट घोषित कर दिया, तब भारत के लिए बीआरआई

के साथ जुड़ना मुश्किल हो गया। फिर, दक्षिण चीन सागर में चीन का अपनी ताकत का दावा करना और वास्तविक नियंत्रण रेखा के पास देपसांग (२०१३ में) और चुमार (२०१४ में) पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (पीएलए) का ज़ोर-शोर से सक्रिय होना साथ-साथ हुआ, जिसने भारत की चिंताओं को हवा दी।[44] अंत में, भारत- प्रशांत क्षेत्र में अमेरिकी नीति पर चीन की चिंता का असर भारत-चीन रिश्तों में दिखना शुरू हो गया। भारत के दृष्टिकोण से, चीन का रुख ये सुझाव देता था कि भारत को इस मामले में चीनी चिंताओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए जबकि वह खुद भारत की चिंताओं के प्रति उदासीन रहा। चीन की नई विदेश नीति जहां भी भारत के क्षेत्रीय और बहुपक्षीय हितों पर असर डालती दिखती है, उस पर भारत की प्रतिक्रियाएं बीजिंग में घबराहट और बेचैनी की वजह बनती दिखती थीं। चीनी नेताओं ने महसूस किया कि जहां उन्होंने भारत के हितों को नुकसान पहुंचाने वाला कोई कदम नहीं उठाया था, भारत उन तरीकों से जवाब दे रहा है जो उन्हें नुकसान पहुंचा सकती हैं।

भारतीय विशेषज्ञ आमतौर पर मानते हैं कि भारत में विदेश नीति की सरकारी समीक्षा चीन की अपनी नीति की समीक्षा करने के एक दशक पहले हुई थी।[45] १९९० के दशक के अंत तक गुटनिरपेक्षता, या सबसे बराबरी की दूरी रखने की नीति पुरानी हो गई थी।[46] चीन के विपरीत, भारत कोई सोचा-समझा नया संगठन सिद्धांत या भारी-भरकम रणनीति नहीं बना रहा था। बल्कि, अपने अनुभवों को देखते हुए इसने अपनी नीति में कुछ बदलाव किए थे। वाजपेयी सरकार ने जहां इसमें परमाणु आयाम जोड़ा; प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की सरकार ने अमेरिकी आयाम जोड़ा; और मौजूदा मोदी सरकार ने समुद्री आयाम जोड़ा है। कुछ चीनी हलकों में इस विश्वास के बावजूद कि मोदी की विदेश नीति में पिछली सरकारों के मुकाबले महत्वपूर्ण बदलाव आए हैं, भारतीय विदेश नीति में एक चीज़ लगातार दिखाई देती रही है – अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जगह बनाने की तलाश और मल्टी एलाइनमेंट (सभी प्रमुख शक्तियों को साथ लेकर चलना) का सिद्धांत।[47]

हालांकि, भारत और चीन के लिए विदेश नीतियों में बदलाव करने की वजहों में एक उल्लेखनीय अंतर है। भारत के लिए, चीन एक महत्वपूर्ण कारक था, जबकि एक नया दृष्टिकोण तैयार करते समय चीन की सोच में भारत शायद ही था। एक के बाद एक सभी भारतीय सरकारों ने सोच-समझकर दो रास्तों पर काम किया: अमेरिका के साथ एक रणनीतिक संबंध बनाना और चीन के साथ जुड़ाव के तौर-तरीके विकसित करना।[48] १९९९ के बाद, भारतीय नेतृत्व ने वास्तविक नियंत्रण रेखा को स्पष्ट करने के लिए एक संयुक्त प्रक्रिया शुरू कर और एक निष्पक्ष, उचित, और दोनों पक्षों को स्वीकार्य समाधान ढूंढ़ने के लिए एक नया, राजनीतिक स्तर का विशेष प्रतिनिधि तंत्र बनाकर चीन के साथ सीमा के प्रश्न का महत्व कम करने के गंभीर प्रयास किए। असफलताओं के बावजूद, मनमोहन सिंह की अगली सरकार ने चीन के साथ बातचीत जारी रखी और अप्रैल २००५ में भारत-चीन सीमा प्रश्न के निपटारे के लिए राजनीतिक मापदंडों और मार्गदर्शक सिद्धांतों पर समझौता किया।[49] महत्वाकांक्षा का ऊंचा स्तर शांति और समृद्धि के लिए भारत-चीन रणनीतिक और सहकारी साझेदारी बनाने के फैसले में दिखा था।[50] इसका ये मतलब नहीं था कि भारत ने इस रिश्ते की चुनौतियों से आंखें मूंद रखी थीं। इसके बजाय, इस बात को लेकर पूरी जागरूकता थी कि भारत चीन के साथ लंबी अवधि की प्रतिद्वंद्विता में शामिल हो सकता है, लेकिन ये प्रतिद्वंद्विता सहयोग के महत्वपूर्ण तत्वों को बाहर नहीं रख पाएगी।[51]

क्या भारतीय दृष्टिकोण से, तुलनात्मक रूप से संबंधों की इस स्थिर अवधि में, सहयोग की भारत की इच्छा का जवाब चीन ने दिया? भारतीय विश्लेषकों का एक छोटा हिस्सा मानता है कि ऐसा तब तक था, जब तक कि (विश्लेषकों के दावे के मुताबिक) मोदी सरकार ने कथित तौर पर पिछली नीति को छोड़ दिया और अमेरिका के साथ गठजोड़ कर लिया।[52] हालांकि, ज़्यादातर लोगों का मानना है कि १९९० के दशक के मध्य से लेकर २००० के दशक के मध्य तक की अच्छी अवधि में भी बीजिंग ने भारत की मुख्य चिंताओं पर संवेदनशीलता नहीं दिखाई। २००५ के समझौते के साल भर के भीतर अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्र को दक्षिण तिब्बत के तौर पर दिखाना भड़काने वाला कदम लगता है। चीन ने अरुणाचल प्रदेश में विकास परियोजनाओं के लिए बहुपक्षीय कर्ज का रास्ता भी रोका। जम्मू और कश्मीर के निवासियों के लिए नत्थी (stapled) वीज़ा शुरू कर चीन ने भारत के दावों के प्रति ना के बराबर सम्मान दिखाया। मुंबई पर नवंबर २००८ के आतंकवादी हमले के कुछ समय बाद संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की १२६७ प्रतिबंध समिति में आतंकवादियों को सूचीबद्ध करने पर चीन ने रोक लगाकर सार्वजनिक महत्व के मामले में ऊंचे दर्जे की संवेदनहीनता दिखाई। दक्षिण एशिया में चीन के बढ़ते कदमों को भी रणनीतिक विश्लेषकों ने नकारात्मक ढंग से देखा।[53] २००९ के मध्य से बातचीत जारी रखने की नीति से हो रहे असमान फायदों पर कुंठा के संकेत सार्वजनिक होने लगे थे। भारतीय सुरक्षा विश्लेषक चेलानी इस विचार को सामने लाने वाले शुरुआती लोगों में थे कि नई दरारें उभरने लगी हैं जो अब तक दबे रणनीतिक मतभेद और प्रतिद्वंद्विता को उजागर कर रही हैं। उन्होंने चीनी मुहावरा

“वेन शुई ज़ू किंग्वा” इस्तेमाल किया जिसका अर्थ है मेंढ़क को मारने के लिए पानी को धीरे-धीरे गर्म करो। चेलानी का मतलब था कि चीनी नीति यही थी कि जब तक चीन के फायदे के लिए नया संतुलन नहीं बन जाता, भारत में कम से कम संदेह पैदा करो।[54]

इसी अवधि के आसपास एक और धारणा ज़ोर पकड़ रही थी: कि चीन इकलौती प्रमुख शक्ति था जो भारत के उदय से असंतुष्ट दिखता था।[55] भारत ने चीन को बिलकुल शुरुआत से एक प्रमुख शक्ति के तौर पर स्वीकार किया है।[56] भारत ने संयुक्त राष्ट्र और विश्व व्यापार संगठन में चीन की सदस्यता के लिए मज़बूती से समर्थन भी दिया।[57] कई भारतीय विशेषज्ञ महसूस करते हैं कि चीन ने, कम से कम बाहरी तौर पर, शायद ही भारत को एक प्रमुख शक्ति के तौर पर स्वीकार किया। पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना के पूर्व चेयरमैन माओत्से तुंग ने भारत को एक पूंजीवादी “नौकर” और भारतीय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू को “साम्राज्यवाद का सहयोगी” कहा।[58] पूर्व प्रधानमंत्री चाऊ एनलाई ने तिरस्कार भरी भाषा का इस्तेमाल करते हुए भारत को “बिना पेंदी का छेद” कहा जिसे विदेशी आर्थिक सहायता की सख्त ज़रूरत थी।[59] ऐसा लगता है कि भारत, चीन, और एशियाई देशों के बारे में देंग के कभी-कभार की गई टिप्पणियों के बावजूद चीनी विदेश नीति प्रतिष्ठान का यही दृष्टिकोण बना रहा।[60] एक प्रमुख शक्ति बनने की भारत की क्षमता पर जाति, गरीबी, और क्षेत्रवाद के विभाजनकारी प्रभाव वाली पुरानी सोच चीनी लेखन में अभी भी सामान्य है।[61] १९९० के बाद हुए बदलावों को उनमें अहमियत नहीं दी जाती है।

एक संभावित कारण हो सकता है भारत के बारे में नई जानकारियों की कमी क्योंकि “सुधार और खुलापन” की नीति के बाद चीन ने अपना ध्यान पश्चिमी देशों की तरफ कर दिया था। शेन ज़िहुआ चीनी विद्वानों की इस कमी के बारे में लिखते हैं, मुझे लगता है कि चीन के संबंध इसके कई पड़ोसियों जैसे वियतनाम, मंगोलिया और भारत के साथ बेहद जटिल और परिवर्तनशील हैं। लेकिन चीनी विद्वानों ने इन संबंधों के इतिहास पर शोध करने के लिए कुछ खास काम नहीं किया है। विद्वान और नीति निर्माता पड़ोस के बारे में बहुत कम जानते हैं। मेरा मानना है कि नीति निर्माताओं को प्रासंगिक पृष्ठभूमि की जानकारी देने में इस नाकामी के लिए इतिहासकारों को जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए।[62]

ऐसा महसूस करने के पीछे ये समझ भी है कि चीन भारत को हमेशा से सिर्फ प्रमुख शक्तियों के साथ संबंध के संदर्भ में देखता आया है। इसका जिक्र नवंबर १९७३ में तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को माओ की टिप्पणी में मिलता है। “भारत ने स्वतंत्रता जीती नहीं। अगर इसने खुद को ब्रिटेन से नहीं जोड़ा होता, तो यह सोवियत संघ से जुड़ जाता।”[63] १९५० के दशक की शुरुआत में, सोवियत नेतृत्व के साथ चीन की बातचीत में भारत का जिक्र हमेशा ही अमेरिका के साथ जुड़ाव के संदर्भ में होता था, बिलकुल उसी तरह जैसे १९७० के दशक में वे अमेरिकी नेतृत्व को सोवियत संघ के साथ भारत के जुड़ाव की बात कहते थे। यह इसके बावजूद था कि वो चीन ही था जो “एक पक्ष में झुका था” और १९५० के दशक में सोवियत संघ के साथ जुड़ गया, और फिर १९७० के दशक में दूसरी दिशा में झुक गया।[64]

इसलिए, जिस तरह से दोनों देशों ने अपनी-अपनी विदेश नीतियों को आकार दिया, उसका कुछ असर मौजूदा हालातों पर दिखता है। एक-दूसरे के व्यापक विदेश नीति लक्ष्यों के लिए भारत और चीन कितनी अहमियत रखते हैं, इसमें असंतुलन बढ़ रहा है। भारत में यह महसूस किया जाता है कि चीन वैश्विक या क्षेत्रीय मामलों में भारत को उचित महत्व देने को तैयार नहीं है। इस धारणा को उन तरीकों से बल मिला जिनसे चीन की व्यापक विदेश नीति के कुछ कदमों – जैसे बेल्ट एंड रोड इनीशिएटिव या हिंद महासागर में अपना दखल बढ़ाने – ने भारत के हितों का सीधा अतिक्रमण किया है।[65] भारत के नज़रिए से, ऐसा लगता है कि चीन ऐसे कदम उठा रहा है जो भारत के हितों में अड़चन डालते हैं। नतीजतन, बीआरआई या दक्षिण चीन सागर जैसे प्रमुख मामलों में भारत की प्रतिक्रिया चीन का विरोध करने की रही है।

ऐसा लगता है कि भारतीय प्रतिक्रिया से चीन बौखला गया। जैसा कि एक चीनी विश्लेषक ने कहा। “हाल के वर्षों में, चीन-भारत संबंधों से जुड़े लगभग सभी विशिष्ट मुद्दों पर चीन ने अच्छी नीयत के साथ सद्भावना दिखाई है, लेकिन बदले में उसे वैसी ही सद्भावना नहीं मिली।”[66] चीन के नज़रिए से, भारत चीन की विदेश नीति का प्रमुख केंद्र नहीं रहा है क्योंकि भारत को वैश्विक प्रभाव वाला एक स्वतंत्र खिलाड़ी नहीं माना जाता है। जैसा कि कुछ विद्वानों ने कहा है, चीन भारत को मुख्य रूप से एक विकासशील देश और एक पड़ोसी के रूप में देखता है।[67] इससे संकेत मिलता है कि जब दोनों पक्ष अपनी-अपनी विदेश नीतियों को नया आकार दे रहे थे, तब एक-दूसरे के प्रति धारणों में एक संभावित असंतुलन शायद भविष्य

की गलतफहमियों और एक-दूसरे के प्रति संदेह की ज़मीन तैयार कर रहा था और इसकी शुरुआत २०१४ के मध्य में मोदी के आने के पहले ही हो गई थी।

चीन और भारत में नया नेतृत्व

२०१४ के मध्य में, भारत ने भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) की अगुवाई वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की नई सरकार चुनी जिसका नेतृत्व मोदी कर रहे थे। पच्चीस सालों में ऐसा पहली बार था जब किसी पार्टी ने संसद के निचले सदन में पूर्ण बहुमत हासिल किया था। भारत और चीन के नए नेताओं – मोदी और शी – की सितंबर २०१४ में एक शुरुआती बैठक हुई जिसने दिखाया कि पिछले कुछ सालों में आए तनावों के बावजूद दोनों पक्ष बातचीत जारी रख रहे हैं। २०२१ की शुरुआत में, जब संबंध टूटते हुए दिख रहे हैं, विशेषज्ञ इस बात पर भी ध्यान दे रहे हैं कि क्या नेतृत्व की शैलियां भी एक संभावित वजह हो सकती हैं। अगर हां तो संबंधों पर नए नेतृत्व का क्या असर पड़ा था?

भारत और मोदी सरकार के बारे में चीन के विचार

लिंग शेंगली जैसे चीनी विद्वानों का कहना है कि जब शी ने चीन की विदेश नीति में पड़ोस को प्राथमिकता देने की घोषणा की, तब उन्होंने इसे एक क्षेत्रीय से वैश्विक शक्ति बनने की चीन की छलांग के रूप में देखा।[68] चीन ने स्वीकार किया कि शीत युद्ध की विरासत, भू-राजनैतिक सीमाओं के आसपास विवादित इलाके, और बाहरी ताक़तों (जैसे अमेरिका) के दखल जैसी वजहों से पड़ोस में हालात जटिल हैं।[69] इसलिए, चीन का एक प्रमुख उद्देश्य था आसपास के क्षेत्र में साझा सुरक्षा का एक समुदाय तैयार करना।[70] दक्षिण एशिया में, चीन आगे बढ़ने में असमर्थ दिख रहा था। चेंग रुईशेंग महसूस करते हैं कि ऐसा इसलिए था क्योंकि दक्षिण एशिया के दूसरे देशों के साथ अलग-अलग और समानांतर रूप से संबंध विकसित करने की चीन की नीति ने भारत में आशंकाओं को जन्म दिया।[71] चीन कुंठित महसूस कर रहा था क्योंकि भारत ने क्षेत्रीय भागीदारी को एक ज़ीरो-सम गेम (zero-sum game) की तरह देखा यानी एक पक्ष का फायदा तभी होगा जब दूसरे पक्ष का बराबर नुकसान होगा। जबकि चीन भारत के पारंपरिक प्रभाव को स्वीकार करने और इसके मुताबिक काम करने के लिए तैयार था।[72] मोदी सरकार के आने से पहले भी यह एक आम चीनी धारणा थी।

जब सितंबर २०१४ में मोदी और शी की मुलाकात हुई, तब बाहरी दुनिया के आगे अच्छे नज़ारे दिखाने के साथ-साथ भारत की चिंताओं को भी सीधे तरीके से उठाया गया। और जब अप्रैल २०१५ में मोदी चीन की यात्रा पर गए, दोनों नेताओं के बीच अच्छी जुगलबंदी के और भी संकेत दिखे, हालांकि चीन- पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर को लेकर शी की निष्ठा भारत को पसंद नहीं आई।[73] साल भर के भीतर, चीनी रणनीतिक समुदाय मोदी सरकार के बारे में कुछ निष्कर्ष निकालने लगा। शुरुआती आकलन यह था कि मोदी के नेतृत्व में भारतीय विदेश नीति "आक्रामक" होगी।[74] उन्होंने कहा कि "पड़ोस को प्राथमिकता" नीति का उद्देश्य दक्षिण एशिया में भारत के दबदबे को फिर से पक्का करना और चीन की रणनीतिक घुसपैठ का जवाब देने के लिए आर्थिक फायदे देना था।[75] अनुमान लगाया गया था कि यह चीन के हितों के खिलाफ होगा। यह सोच चीन के उस विश्लेषण में सटीक बैठती थी कि भारत ने दक्षिण एशिया में चीन के प्रवेश को ज़ीरो-सम (एक का फायदा तो दूसरे का बराबर नुकसान) के तौर पर देखा।[76] हिंद महासागर के समुद्री क्षेत्रों पर भारत के ध्यान देने के पीछे मोदी सरकार की ये मंशा बताई गई कि हिंद महासागर में भारत अपनी अगुवाई वाली समुद्री सुरक्षा श्रृंखला बनाना चाहता है, साथ ही लुक ईस्ट से हटकर एक्ट ईस्ट की नीति के माध्यम से प्रशांत क्षेत्र की तरफ बढ़ना चाहता है।[77] अंत में, चीन ने निष्कर्ष निकाला कि मोदी के अंदर, भारत अमेरिका की तरफ अधिक उद्देश्यपूर्ण ढंग से बढ़ रहा है। जो बात नहीं कही जा रही थी, वो ये थी कि मोदी की नीति का मकसद चीन से क्षेत्रीय और वैश्विक दोनों स्तरों पर मुकाबला करना है। फिर भी, चीनी विश्लेषकों ने सोचा था कि जहां दक्षिण एशिया और हिंद महासागर में चीन के प्रवेश को लेकर भारत रणनीतिक रूप से सावधान रहेगा, वहीं द्विपक्षीय और बहुपक्षीय मामलों में सामंजस्य और सहयोग की काफी गुंजाइश है। चीन की कहानी में एक बेसुरी तान थी बीजेपी का वर्णन "दक्षिणपंथी- पथभ्रष्ट" राजनीतिक दल की तरह करना।[78]

समय के साथ चीनी रणनीतिक समुदाय के संदेह यकीन में बदल चुके हैं। भारत के व्यवहार को दो भू-राजनीतिक घटनाक्रमों पर आंका जाता है – चीन का बीआरआई और अमेरिका की भारत- प्रशांत क्षेत्र रणनीति। बीआरआई पर, चीन सोचता है उसने 'चीन एंड इंडिया प्लस वन' के प्रारूप का प्रस्ताव देकर भारत को समायोजित करने की कोशिश की है। भारत यह समझने में नाकाम रहा है कि चीन की मैरिटाइम सिल्क रोड इनीशिएटिव का मकसद टकराव नहीं बल्कि दक्षिण एशिया में रणनीतिक स्थिरता को बढ़ावा देना है।[79] भारत- प्रशांत क्षेत्र के संदर्भ में, चीनी सरकार ने यह निष्कर्ष निकाला लगता है कि भारत का रणनीतिक उद्देश्य चीन को नाकाम करना है। बीजिंग का विश्वास है कि "क्षेत्र में सबके लिए सुरक्षा और विकास" और "भारत- प्रशांत क्षेत्र के लिए विज़न" जैसे भारी-भरकम शब्दों का इस्तेमाल करके भारत अपने असली इरादे छिपाना चाहता है।[80] चीनी कूटनीतिक समुदाय मानता है कि अमेरिका के साथ रणनीतिक समन्वय की तरफ कदम बढ़ाकर मोदी सरकार ने अपना पारंपरिक रुख छोड़ दिया है कि भारत समुद्री क्षेत्र में दूसरे देशों के मामलों या हितों से अलग रहेगा।

चीनी विदेश मंत्रालय से संबद्ध चाइनीज़ इंस्टीट्यूट फॉर इंटरनेशनल स्टडीज़ के वाइस प्रेसिडेंट रोंग यिंग का विचार है कि मोदी का उद्देश्य भारत को एक प्रमुख शक्ति के रूप में पेश करना है, केवल संतुलन बनाने वाली एक शक्ति के तौर पर नहीं, भले ही इस वजह से चीन के हितों और भारत और चीन के बीच रणनीतिक विश्वास को नुकसान पहुंचता हो।[81] इसके लिए बीजेपी की राजनीतिक विचारधारा को एक बड़ी वजह बताया जाता है। भारत की नीति को पूरे भारत के हितों के बजाय बीजेपी के राजनीतिक हितों से निर्देशित नीति के तौर पर देखा जा रहा है।[82] भारत-चीन रिश्तों के विकास में रुकावट के रूप में हिंदू राष्ट्रवाद के उदय और मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद से रिश्तों में आई गिरावट के आपसी संबंध ने चीन में गहरी जड़ जमा ली है। साथ ही, एक मज़बूत धारणा यह भी थी कि मोदी सिद्धांत एक खूबसूरत विज़न सामने लाता है, लेकिन सच्चाई कुछ हद तक घिसी-पिटी है।[83] चीनी विद्वान महसूस करते हैं कि सभी वैश्विक सूचकों पर भारत चीन से काफी पीछे है और मोदी सरकार की उपलब्धियां कमज़ोर बुनियादों पर टिकी हैं — सामाजिक बंटवारा, कमज़ोर आधारभूत ढांचा, और धीमा पड़ता आर्थिक विकास।[84] यह संभव है कि इस धारणा ने ही चीनी सेना को वास्तविक नियंत्रण रेखा के नज़दीक भारत के खिलाफ ज़्यादा आक्रामक रुख लेने की प्रेरणा दी हो और यही धारणा उन घटनाओं की श्रृंखला की वजह साफ़ कर सकती है जो २०१३ के बाद हुई हैं। चीनी विश्लेषक एक प्रमुख शक्ति बनने की भारतीय आकांक्षाओं को बढ़ा-चढ़ाकर देखी जा रही आत्म-छवि के तौर पर खारिज करते दिखते हैं। यहां से, उन विशेषज्ञों के लिए इस निष्कर्ष पर पहुंचना बेहद आसान है कि भारत चीन के रणनीतिक प्रतिद्वंद्वियों के साथ गठजोड़ करके क्षेत्र और विश्व में अपनी महत्वाकांक्षा और एजेंडा को पूरा करने की कोशिश करेगा।[85]

चीन और शी प्रशासन पर भारत का दृष्टिकोण

२०१२ में चीन में नेतृत्व परिवर्तन पर भारतीय विद्वानों की नज़र पूरी दिलचस्पी के साथ थी। यह सत्ता का एक और पीढ़ीगत हस्तांतरण था। शी में बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं थी। ज़्यादातर भारतीयों ने उम्मीद की थी कि चीन आर्थिक विकास के अच्छे आंकड़े पेश करता रहेगा, और चीन की आर्थिक सफलता के प्रति जनमत आमतौर पर सकारात्मक और यहां तक कि प्रशंसा से भरा था। कूटनीतिक समुदाय और संभ्रांत वर्ग चीन के भू-राजनीतिक कदमों को लेकर सतर्क था, लेकिन कुल मिलाकर संबंधों के बारे में निराशावादी नहीं था।[87] शी के पहले कार्यकाल की शुरुआत में, आम भावना थी कि भारत- चीन रिश्ते पहले की तरह बने रहेंगे, लेकिन चीन के भू-राजनीतिक कदमों की वजह से इन्हें बीच-बीच में हल्के झटके लगते रहेंगे, जैसा कि पिछले दशक का पैटर्न बन गया था।[88]

दक्षिण चीन सागर में चीन की सक्रियता और भारत-चीन वास्तविक नियंत्रण रेखा के पास इसके कदम साथ-साथ शुरू हुए, और २०१३ के अंत में अस्ताना और जकार्ता में बीआरआई और मैरिटाइम सिल्क रोड के बारे में शी की घोषणाओं ने विशेषज्ञों का ध्यान खींचा। शी को ऐसे चीनी नेता के तौर पर देखा जाने लगा जो अपने पहले के नेताओं की तुलना में विदेश नीति पर अमल करने में अधिक सक्रिय है। चीन-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर को बीआरआई के तहत एक मुख्य परियोजना बनाने का शी का एलान चीन के बारे में भारतीय धारणाओं को गढ़ने में एक महत्वपूर्ण मोड़ दिखता है, क्योंकि इस परियोजना का कुछ हिस्सा पाकिस्तान अधिकृत जम्मू और कश्मीर के क्षेत्रों से होकर गुजरता है।[89] भारत चीन और पाकिस्तान के रिश्तों को लेकर हमेशा से काफी संवेदनशील रहा है, हालांकि समय के साथ संवेदनशीलता में इस वास्तविकता की समझ से कमी आई है कि यह एक रणनीतिक गठबंधन है जिसे किसी भी दबाव से भंग नहीं किया जा सकता है।[90] हालांकि, सीपीईसी को नई दिल्ली ने अपनी एक बड़ी चिंता की पूरे तौर पर अवहेलना के तौर पर देखा।[91]

रिश्तों का बिगड़ना जारी रहा। २०१६ और २०१७ में, चीन ने एक बार फिर पाकिस्तान स्थित जैश-ए-मोहम्मद के नेता मसूद अज़हर को एक आतंकवादी के तौर पर सूचीबद्ध किए जाने के रास्ते में रुकावट डाली। चीन ने न्यूक्लियर सप्लायर्स ग्रुप में भारत की सदस्यता का विरोध किया (२०१६)। वास्तविक नियंत्रण रेखा पर चीन भारत को आजमाता रहा, और ऐसी खबरें भी आईं कि पाकिस्तान अधिकृत जम्मू और कश्मीर में चीनी सेना और पाकिस्तानी सेना ने संयुक्त रूप से गश्ती की। व्यापार और निवेश का उद्देश्य संबंधों को मज़बूत करना था, लेकिन यह उद्देश्य व्यावसायिक इरादों का शिकार हो गया। व्यापार घाटा २०१२ में २८.८७ अरब डॉलर से बढ़कर २०१७ में ५१ अरब डॉलर तक पहुंच गया।[92] चीन ने ना तो मामले को गंभीरता से लिया और ना ही सिस्टम की कमियों को दूर करने पर काम किया। चीन का दावा था कि भारतीय उत्पाद प्रतिस्पर्धा में कमज़ोर साबित होते थे, लेकिन वो इस बात को साफ़ नहीं कर सका कि भारतीय दवा, सूचना तकनीक और ऑटोमोबाइल निर्यातकों को चीनी बाज़ार में पहुंच क्यों नहीं मिल सकी जब इन उत्पादों ने दूसरे प्रतिस्पर्धी बाज़ारों में सफलतापूर्वक जगह बनाई थी। २०१४ में शी ने वादा किया था कि भारत में २० अरब डॉलर का निवेश किया जाएगा लेकिन चीन ने कोई बड़ा निवेश नहीं किया।[93]

जब भारत ने जवाबी कदम उठाए, बीजिंग ने नाराज़गी जताई और इसके लिए दक्षिणपंथी या हिंदू राष्ट्रवादी दबाव को जिम्मेदार ठहराया। हू और वांग जुइ जैसे विश्लेषकों ने तर्क दिया कि "भारतीय राजनीतिक माहौल में दक्षिणपंथी प्रवृत्तियों ने मोदी प्रशासन के लिए चीन के प्रति एक कड़ी विदेश नीति पर आगे बढ़ने की बुनियाद तैयार की है।"[94] भारत में, यह भावना बढ़ती जा रही थी कि शी के नेतृत्व में भारत की चिंताओं के प्रति संवेदनशीलता घटी है और रिश्तों के समीकरण बदल गए हैं।[95] २०१७ के डोकलाम विवाद के दौरान रिश्ते संकट में आ गए।[96] भारत के दृष्टिकोण से, डोकलाम पठार में चीन की दादागिरी - जाम्फेरी (या ज़ोम्पेलरी) चोटी पर एकतरफा दावे के संभावित उद्देश्य के साथ – विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से निपटाने के राजीव गांधी- देंग ज़ियाओपिंग सहमति की बुनियाद पर ही सवाल उठाती दिखती है। भारतीय विशेषज्ञों ने लिखा कि "मौजूदा मोडस विवेंडी को नए सिरे से गढ़ना होगा और भारत-चीन रिश्तों में नए संतुलन की तलाश करनी होगी क्योंकि शायद दोनों देशों ने अपने मूलभूत हितों की परिभाषा का विस्तार कर लिया है और बहुत ज़्यादा संवेदनशीलता दिखा रहे हैं।"[97]

इस तरह, मौजूदा नेतृत्व को लेकर एक-दूसरे की धारणाएं भारत-चीन रिश्तों में अंतर्निहित अविश्वास और गलतफहमी के ऊपर चढ़ी एक महत्वपूर्ण परत जैसी लगती है। बीजिंग को लगता है कि मोदी सरकार ज़्यादा मुखर है, चीन की मूलभूत चिंताओं को लेकर कम संवेदनशील है, और उसके चीन के प्रतिद्वंद्वियों के पक्ष में जाने की ज़्यादा संभावना है। चीन यह नहीं मानता है कि उसकी नीतियां या कदमों ने भारतीय पक्ष को उचित कारण दिए हैं कि वो चीन को अपने लिए एक रणनीतिक खतरा मानें। इस बात को खास तवज्जो नहीं दी जाती दिखती कि मोदी ने बातचीत की नीति को जारी रखा (जहां वे अनौपचारिक शिखर सम्मेलनों में मिलते हैं) जो उनके पहले की सरकारों ने शुरू की थी। ऐसा लगता है कि बीजिंग ने मोदी की उस शैली की गलत व्याख्या की है जिसमें वो चीन के साथ मतभेदों को स्वीकार करते हैं और साफ़-साफ़ जताते हैं। साथ ही भारत के अहम हितों को मुखर होकर व्यक्त करने और बराबरी के व्यवहार की उम्मीद करने में एक अलग आत्मविश्वास दिखाते हैं, जो उनके पहले के प्रधानमंत्रियों के रुख से काफी अलग है।[98] शायद इसे कुछ हद तक इस तथ्य से भी समझा जा सकता है कि १९८८ से २०१४ तक चीन के साथ बातचीत करने वाली सारी सरकारें गठबंधन की सरकारें थीं, और बीजिंग को शायद यह समझ नहीं आया होगा कि जिस सरकार को स्पष्ट बहुमत हासिल है, वो विदेश नीति में भी ज़्यादा लचीलापन ला सकती है।

भारत में शी के नेतृत्व वाले चीन के मौजूदा प्रशासन को लेकर धारणाएं भी काफी बदली हैं। शी के चीन को भारत की चिंताओं को कुचलने का ज़्यादा इच्छुक माना जाता है अगर भारत "विश्व मंच के केंद्र के नज़दीक जाने" के चीन के राष्ट्रीय उद्देश्य को मौन स्वीकृति नहीं देता है।[99] भारतीय विशेषज्ञ अब ये भी मानने लगे हैं कि भारत की मूलभूत चिंताओं के प्रति चीन की "संवेदनहीनता" एक सोची-समझी नीति है।[100] मोटे तौर पर यही भावना है कि चीन के साथ ज़्यादा जुड़ाव के फायदे केवल एक पक्ष के लिए हैं।

दोनों पक्षों को यह भी लगता है कि दूसरा पक्ष राष्ट्रवाद का जाप बहुत ज़्यादा कर रहा है। दोनों पक्षों में एक-दूसरे की राजनीतिक प्रणाली को लेकर ज़्यादा खुली आलोचना हो रही है।[101] दोनों पक्ष खुद को और एक-दूसरे को कैसे देखते और समझते हैं, इसे लेकर खाई बढ़ती जा रही है। इसलिए, एक-दूसरे की अलग-अलग पहचान और नीतियों की अलग-अलग व्याख्या की वजह से गलतफहमियां पैदा होती हैं। दोनों पक्षों में यह प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है कि एक-दूसरे की नीतियों के पीछे गलत इरादे देखते हैं, और इस वजह से दूसरे पक्ष को संदेह का लाभ देने की इच्छा घटती जा रही है।

इरादों पर संदेह और एक-दूसरे की पहचान को समझने में अंतर समय के साथ बढ़ता गया है, और अब इस रिश्ते में एक नया बाहरी तत्व आ गया है, जिसके अर्थ दोनों पक्षों के लिए अलग-अलग हैं। जब भारत ने चीन की तरफ से उपेक्षा महसूस की, अमेरिका ने भारत को लुभा लिया। जहां भारत ने अमेरिकी साझेदारी को अपनी बहुपक्षीय रणनीति को लागू करने की दिशा में एक सामरिक कदम माना, चीन ने इसे अमेरिका के साथ अपनी प्रतिद्वंद्विता के संकीर्ण चश्मे से देखा। क्या अमेरिका के साथ भारत के रिश्तों ने चीन के साथ रिश्तों में विश्वास को बिगाड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई?

भारत-चीन-अमेरिका त्रिकोण

अमेरिका १९४५ में एशिया में क्षेत्रीय व्यवस्था का जमानतदार रहा है। चीन ने हमेशा अमेरिका को एक वैचारिक चुनौती माना, लेकिन चीन के आधुनिकीकरण के लिए अमेरिका की टेक्नोलॉजी और पूंजी की ज़रूरत थी, और बीजिंग ने अमेरिकी दबदबे के हिसाब से खुद को तब तक ढाला जब तक कि उसे अपनी ताक़त पर भरोसा नहीं हो गया। भारत और अमेरिका के रुख हमेशा एक जैसे नहीं रहे हों, लेकिन उनके मतभेद कभी भी वैचारिक नहीं थे, और भारत अपने आधुनिकीकरण में अमेरिका को एक महत्वपूर्ण सहयोगी मानता है। जब चीन भारत- प्रशांत क्षेत्र में अमेरिकी दबदबे को चुनौती देने की तैयारी कर रहा है और भारत घरेलू और रणनीतिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अपनी समुद्री नीति को नए सिरे से परिभाषित कर रहा है, भारत- प्रशांत क्षेत्र में अमेरिकी उपस्थिति जांच का विषय है, खासकर इसका कितना असर भारत-चीन रिश्तों के भविष्य पर हो सकता है।

चीन का दृष्टिकोण

जब से तत्कालीन अमेरिकी विदेश मंत्री जॉन फोस्टर डलेस ने सैन फ्रांसिस्को में एक सम्मेलन में कहा कि बदलाव लाने के लिए अमेरिका "शांतिपूर्ण विकास" की नीति लागू करेगा, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने हमेशा संयुक्त राज्य अमेरिका को एक खतरा माना है।[102] चीन के पूर्व नेता बो यिबो ने डलेस के भाषण पर माओ की प्रतिक्रिया को याद करते हुए कहा, "माओ ने कहा कि अमेरिका हमें नष्ट करना और बदलना चाहता है. . . . दूसरे शब्दों में वह अपनी व्यवस्था कायम रखना चाहता है और हमारे सिस्टम को बदलना चाहता है। वह शांतिपूर्ण विकास के द्वारा हमें भ्रष्ट करना चाहता है।"[103] माओ के बाद के हर चीनी नेता ने इसी विश्वास का अनुसरण किया है। इसलिए भारत की अमेरिका से कथित नज़दीकी चीन के चिंता की वजह है। १९९० के दशक की शुरुआत से लेकर २००८ तक ये चिंता कम हो गई, जब चीन-अमेरिका संबंध सकारात्मक रहे, लेकिन पूरी तरह गायब कभी नहीं हुई।

चीनी और भारतीय विश्लेषकों के बीच मोटे तौर पर सहमति है कि २००८ भारत- अमेरिका- चीन त्रिकोण के लिए एक महत्वपूर्ण साल था। एक चीनी विद्वान के मुताबिक, यही वह साल था जब चीन अमेरिका का रणनीतिक प्रतिद्वंद्वी बना, जबकि भारत प्रतिसंतुलन (एक वजन जो दूसरे वजन को संतुलित रखता है) बन गया।[104] दूसरों ने इसे और साफ़-साफ़ कहा- अमेरिकी नीति में एक साथ दो तरह के बदलाव दिखने लगे- अमेरिका ने भारत के साथ अपने रिश्ते को पाकिस्तान के साथ रिश्ते से अलग किया, वहीं चीन के साथ अपने रिश्ते को भारत के साथ रिश्ते से जोड़कर देखने लगा।[105] बड़ी मात्रा में चीनी शोधार्थी ने एक तरफ अमेरिका के एशिया की धुरी होने और समुद्री इलाके पर भारत का ध्यान बढ़ने और दूसरी तरफ चीन की नौसैनिक शक्ति के विस्तार और हिंद महासागर में इसकी घुसपैठ के बीच सीधा संबंध देखते हैं। इन विश्लेषकों का कहना है कि हिंद महासागर में चीन को आने से रोकने के भारत और अमेरिका के साझा रणनीतिक उद्देश्य ने चीन के पास हिंद महासागर में जाने वाली 'ब्लू वॉटर' नौसैनिक बल बनाने के अलावा कोई रास्ता नहीं छोड़ा था।[106] इस तर्क के जरिए वे भू-राजनीतिक समानता स्थापित करने के लिए जवाबी कार्रवाई के तौर पर चीनी नौसेना के जमावड़े को सही ठहराते हैं, और चीन हिंद महासागर में अपने अड्डों का बचाव अपने हितों की सुरक्षा और सार्वजनिक वस्तुओं की अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा के एक वैध माध्यम के रूप में करता है।[107]

कुछ चीनी विद्वान कहते हैं कि इन चीनी गतिविधियों ने भारत की चिंताएं बढ़ाई हैं, लेकिन उनका मानना है कि भारतीय चिंताएं बढ़ा-चढ़ाकर पेश की गई हैं और यहां तक कि गलत दिशा में हैं।[108] मैरिटाइम सिल्क रोड का इरादा क्षेत्रीय ताक़तों की जगह लेना नहीं है, ना ही हिंद महासागर में

चीन की मौजूदगी का मतलब क्षेत्र में भारत की पारंपरिक भूमिका को सीमित करना है।[109] दरअसल, कुछ विद्वानों का तो दावा है कि चीन का भारत-प्रशांत क्षेत्र में भू-राजनीतिक ढांचे के पुनर्गठन का कोई इरादा नहीं है बल्कि वो केवल अपनी स्थिरता और विकास को सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक परिस्थितियों को संरक्षित कर रहा है।[110] इसलिए, चीनी विद्वानों के मुताबिक, यह भू-राजनीतिक प्रभाव के लिए नहीं बल्कि आर्थिक ताक़त की कोशिश है, जिसके लिए मुक्त व्यापार समझौतों, नए बंदरगाहों, और हिंद महासागर क्षेत्र में दूसरी बुनियादी सुविधाओं के निर्माण की ज़रूरत है।[111] इसलिए, उनका तर्क है कि चीन के बारे में पश्चिमी देशों की गलत धारणाओं के प्रभाव में भारत चीन की इन नीतियों की गलत व्याख्या करता है।[112] चीनी विद्वानों का मानना है कि अगर भारत केवल यह स्वीकार करता है कि क्षेत्र में दोनों देशों के साझा हित और जिम्मेदारियां हैं, और अगर वो तीसरे पक्षों द्वारा निर्मित बाधाओं को दूर करता है, तब चीन अभी भी मौजूदा द्विपक्षीय दिक्क़तों के बावजूद भारत को एक रणनीतिक भागीदार के रूप में देखने को तैयार है।

क्या चीनी रणनीतिक समुदाय यह मानता है कि मलक्का दुविधा के संदर्भ में भारत चीन के नौवहन और वाणिज्य के लिए खतरा है? भले ही कई चीनी विशेषज्ञों का आरोप है कि भारत उत्तरी हिंद महासागर को अपने प्रभाव क्षेत्र के रूप में रखना चाहता है, कुछेक चीनी लेखन में ही कहा गया है कि इस इलाके में भारतीय गतिविधि संचार की समुद्री लाइनों के चीन के इस्तेमाल के लिए खतरा हैं। उनकी चिंता एशिया-प्रशांत क्षेत्र में हब-एंड-स्पोक्स गठबंधन प्रणाली को बदलकर भारत- प्रशांत क्षेत्र में आपस में जुड़े हुए सिक्योरिटी नेटवर्क बनाने को लेकर है, जिसमें भारत भी शामिल है। उनका दावा है कि ऐसा करके अमेरिका चीन को नियंत्रित करना चाहता है।[113] इससे भारत को इस बात का प्रोत्साहन मिल रहा है कि वह अमेरिकियों को दिखाए कि हिंद महासागर में चीन को संभालने में वह एक विश्वसनीय भागीदार हो सकता है। माना जाता है कि मोदी सरकार भारत को एक संतुलन बनाने वाले देश के रूप में स्थापित करना चाहती है, और पूरी तरह से शक्ति संतुलन की राजनीति में लगी है।[114] भारत अमेरिका की मदद करता है ताकि क्षेत्रीय संतुलन को अपने पक्ष में झुका सके। ऑस्ट्रेलिया, भारत, जापान और अमेरिका के बीच चतुर्भुज सुरक्षा संवाद (Quadrilateral Security Dialogue) के पुनरुत्थान ने चीनी रणनीतिक विशेषज्ञों की इस सोच को मज़बूत किया है कि चीन को नियंत्रित करने की इस अमेरिकी पहल का हिस्सा भारत भी है।[115] इसके नतीजे में, प्रशांत और उत्तरी हिंद महासागर में रणनीतिक संतुलन के लिए चीन की कोशिशों ने भारत के रणनीतिक दायरे और चीन की रणनीतिक परिधि के बीच टकराव पैदा कर दिया है और दोनों देशों के बीच बढ़ते तनाव की एक वजह बन गई है। चीन मानता है कि हिंद महासागर में भारत-चीन प्रतिस्पर्धा अमेरिकी उद्देश्यों और मोदी की विदेश नीति के लिए उपयुक्त है।

चीन के दृष्टिकोण से, चीन- अमेरिका संबंधों में ढांचागत विरोधाभास पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के शासनकाल में बढ़े जबकि आर्थिक सहयोग, जो अमेरिका- चीन संबंधों को स्थिर करने वाला आधार था, वॉशिंगटन के व्यापार युद्ध शुरू करने के बाद कमज़ोर हो गया। या जैसा कि यान ने कहा, "दोस्त होने का नाटक करने" का युग अब खत्म होता लग रहा है।[116] चीनी विद्वान मानते हैं कि नए राष्ट्रपति जो बाइडेन के प्रशासन में भी इस परिस्थिति में कोई मौलिक बदलाव आने की संभावना नहीं है।[117] इसलिए, उन्हें उम्मीद है कि अमेरिकी नीति भारत-प्रशांत क्षेत्र में संरचनाओं के निर्माण में तेज़ी लाएगी ताकि चीन के उदय को नियंत्रित, या कम से कम धीमा किया जा सके। ट्रंप प्रशासन के दौरान अमेरिका के भारत के साथ रक्षा संबंध मज़बूत किया जाना — २ + २ मंत्रिस्तरीय प्रारूप, रणनीतिक संबंधों के लिए बुनियादी समझौते (जैसे लॉजिस्टिक्स एक्सचेंज मेमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट), और दोनों देशों की नौसेनाओं के बीच एक-दूसरे के साथ काम करने की बढ़ती क्षमता -- सबसे सावधानीपूर्वक अध्ययन किए जाने वाले पहलुओं में एक है।

भारत- प्रशांत ऐसा क्षेत्र है जहां अमेरिका के साथ अपने संबंध की वजह से भारत २०१७ के बाद से चीन की विदेश नीति को गढ़ने में एक कारक बनता जा रहा है।[118] कुछ विद्वानों ने हाल ही में दावे के साथ कहा है कि चीन ने अपना मन बना लिया है कि भारत अमेरिका की तरफ झुकेगा, और उद्देश्य होगा चीन को नियंत्रण में रखना।[119] कुछ दूसरों का मानना है कि भारत- अमेरिका संबंध कोई अर्ध-गठबंधन नहीं है क्योंकि भारत ने अपनी रणनीतिक स्वायत्तता नहीं छोड़ी है।[120] यह मुमकिन है कि बाहरी दुनिया को दिखाने और भारत पर दबाव डालने के मकसद से, चीन गठबंधन के तर्क को उछाले, लेकिन चीन भी भारत को सिर्फ अमेरिका के चश्मे से देखने की वही बुनियादी गलती कर रहा होगा। भारत- प्रशांत क्षेत्र में भारत- अमेरिका के करीबी रिश्तों की संभावना शी के चीन को एक ताक़तवर समुद्री हैसियत बनाने के लिए मजबूर कर रही है जो इस क्षेत्र में उसकी

राष्ट्रीय सुरक्षा की ज़रूरतों को पूरा कर सके और पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र और फिर मलक्का जलडमरूमध्य से आगे रणनीतिक संतुलन को नए सिरे से परिभाषित करने में मदद करे।[121] यह दृष्टिकोण भारत-चीन संबंधों को बड़े पैमाने पर उलझा सकता है।

भारत का दृष्टिकोण

हिंद महासागर कई वजहों से भारत के लिए बहुत ज़्यादा महत्वपूर्ण हो गया है, और १९९८ के बाद से सरकारों ने समुद्र पर ध्यान केंद्रित करके भारत के रणनीतिक हितों को नए सिरे से परिभाषित करना शुरू कर दिया। वाजपेयी सरकार ने उन्नत प्रौद्योगिकी पोत (परमाणु पनडुब्बी) कार्यक्रम की शुरुआत की और अंडमान और निकोबार कमान भी स्थापित किया। सिंह सरकार ने परमाणु पनडुब्बी कार्यक्रम में तेज़ी लाकर और स्वदेशी विमानवाहक पोत, आईएनएस *विक्रांत* बनाने का फ़ैसला लेकर इस कार्यक्रम के महत्व को रेखांकित किया। इसमें कोई दो राय नहीं है कि हिंद महासागर में चीन के बढ़ते कदम इसकी एक बड़ी वजह थे। १९९० के दशक के उत्तरार्ध से, भारतीय टिप्पणीकारों और विशेषज्ञों ने चीनी लेखन, जिनमें सैन्य लेखन भी शामिल था, उनमें हिंद महासागर का जिक्र बढ़ता हुआ देखा था। १९९० के दशक के अंत में रूसी कुज़्नेत्सोव- श्रेणी विमानवाहक पोत की खरीद ने भी भारतीय विशेषज्ञों का ध्यान खींचा था।[122] उत्तरी हिंद महासागर आम तौर पर भारतीय प्रभाव का क्षेत्र माना जाता है। पिछले वर्षों में, भारत ने दूसरे खिलाड़ियों को बर्दाश्त किया है, और जब चीन की अर्थव्यवस्था विकसित हो रही थी, इसकी उम्मीद थी कि चीन संचार की महत्वपूर्ण समुद्री लाइनों में अपने हितों की रक्षा के लिए साधन विकसित करेगा। भारतीय विशेषज्ञों को जिस चीज़ ने ज़्यादा चिंतित किया, वो था इस क्षेत्र में चीन को चुनौती देने के भारत के इरादे के बारे में चीनी सेना के लेखन में नकारात्मक निष्कर्ष।[123]

ऐसा लगता है कि चीन की चिंता अमेरिका के साथ भारत के समुद्री संबंध से बढ़ी है। चीन यह स्वीकार नहीं करता है कि यह हिंद महासागर में उसके अपने आक्रामक व्यवहार का नतीजा हो सकता है जिसमें भारत के हितों का ना के बराबर सम्मान किया गया। यहां घटनाक्रम महत्वपूर्ण है। चीन ने इस सदी के पहले दशक के अंत में - भारतीय प्रायद्वीप के चारों तरफ बंदरगाहों और बंदरगाह के लिए ज़रूरी बुनियादी ढांचे का निर्माण शुरू किया— म्यांमार में क्यौकफू से लेकर पाकिस्तान में ग्वादर तक, जिसे "मोतियों की लड़ी" का नाम दिया गया। इस चिंता को जायज ठहराने के बजाय, चीन ने हिंद महासागर में बुनियादी ढांचा बनाने की अपनी गतिविधि को मैरिटाइम सिल्क रोड का हिस्सा बताकर भू-रणनीतिक आवरण देना चाहा। जैसा हर्ष पंत ने कहा, "यह मुमकिन है कि भारत के चारों तरफ इन बंदरगाहों और सुविधाओं के निर्माण को शुद्ध रूप से आर्थिक या व्यावसायिक आधार पर सही समझा जा सकता है, लेकिन भारत के लिए यह दूसरे तरीकों से नियंत्रण की नीति की तरह दिखता है।"[124]

भारत से बातचीत करने की या उसकी चिंताओं को दूर करने की कोई कोशिश नहीं की गई। दक्षिण चीन सागर में चीन के व्यवहार और उत्तरी हिंद महासागर में उसकी नौसैनिक गतिविधि को भारत के नुकसान की कीमत पर चीन के रणनीतिक फायदे के तौर पर देखा गया था।[125] भारत और अमेरिका का एक-दूसरे की तरफ झुकाव को इन परिस्थितियों के बीच देखने की ज़रूरत है। इंडो-अमेरिकन ज्वॉइंट स्ट्रैटेजिक विज़न फॉर दि एशिया- पैसिफिक एंड दि इंडियन ओशन, और लॉजिस्टिक्स एक्सचेंज मेमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट जैसे समझौतों की शुरुआत चीन के नौसैनिक विस्तार और इस क्षेत्र में उसके आक्रामक रवैये के बाद हुई। भारत के नज़रिए से भारत -अमेरिका संबंधों को देखने की बजाय, चीन उन्हें सिर्फ अमेरिका के साथ अपनी प्रतिद्वंद्विता के संदर्भ में देखता है। इस तरह, चीन निष्कर्ष निकालता है कि भारत-अमेरिका नौसैनिक सहयोग चीन को घेरने और नियंत्रण में रखने की अमेरिकी योजना में भारत की भागीदारी की सबूत है।

लेखक का यह मानना है कि चीनी विश्लेषकों को मोदी सरकार की भारत- प्रशांत क्षेत्र नीति को समझने की कोशिश करनी चाहिए। इसमें कई महत्वपूर्ण विषय हैं जैसे भारत की आर्थिक और ऊर्जा सुरक्षा, इस्लामी कट्टरपंथ और आतंकवाद, और नशीले पदार्थों और हथियारों की तस्करी, साथ ही द्वीपीय इलाकों के विकास से संबंधित घरेलू ज़रूरतें, विशेष आर्थिक क्षेत्र का संरक्षण, और समुद्र तटीय इलाकों में कनेक्टिविटी बेहतर करना। चीन की ही तरह समुद्री क्षेत्र में भारत के हितों का भी विस्तार हुआ है। जहां भारत ने कभी भी चीन को उचित रास्ता देने की रणनीतिक ज़रूरतों से कभी इनकार नहीं किया, चीनी रणनीतिकार अमेरिका के साथ समुद्री सहयोग के भारत के इरादों पर लगातार सवाल उठा रहे हैं। यह सोचना कि इस सहयोग को बंद करने से दिक्कत दूर हो जाएगी, यह स्वार्थ और पाखंड है। चीन ने अमेरिका के साथ सहयोग कर तीन दशकों तक बड़े

फायदे हासिल किए हैं। और अब ये दावा करना कि भारत-अमेरिका सहयोग का इरादा केवल चीन के उदय को रोकना है, इसे "भेड़िया आया चिल्लाने" की रणनीति की तरह देखा जाता है।

चूंकि भारत के इरादों पर चीन के अविश्वास का एक महत्वपूर्ण कारक क्वाड है, इसकी बारीकी से जांच करते हैं। जब २००७ में पहली बार क्वाड का विचार आया, बीजिंग की तीखी प्रतिक्रिया से संकेत मिला कि चीन की चिंताएं दूसरी वजहों से उपजी हो सकती हैं।[126] २००३ में तत्कालीन राष्ट्रपति हू जिंताओ के चीन की "मलक्का दुविधा" के बारे में बोलने के बाद चीन ने अपनी नौसैनिक ताक़त को बढ़ाने पर दोबारा ध्यान लगाया। २०१० के बाद चीनी नौसैनिक योजनाओं-- दक्षिण चीन सागर में नया दावा (जिसे नाइन- डैश लाइन कहा जाता है); समुद्री अधिकारों और हितों पर एक नई पार्टी कमेटी; विश्व स्तर पर सबसे बड़े युद्धपोत का निर्माण; दक्षिण चीन सागर का सैन्यीकरण; हिंद महासागर में नागरिक समुद्र विज्ञान सर्वेक्षण के लिए योजनाबद्ध तैयारी, जिस सर्वेक्षण के दायरे में महाद्वीपीय जलसीमा और तटवर्ती राज्यों के विशेष आर्थिक क्षेत्र भी शामिल थे; और जिबूती में चीन का पहला विदेशी सैन्य अड्डा— से पता चलता है कि इसकी योजनाएं क्वाड के काफी पहले से उन्नत चरणों में थीं।[127] ऐसा लगता नहीं है कि बीजिंग का नौसैनिक विस्तार क्वाड से पैदा हुए खतरे का नतीजा था।

त्रिकोणीय संबंध के सिलसिले में दोनों पक्षों के रुख और बर्ताव में भारी अंतर इसलिए हो सकता है क्योंकि भारत और चीन दोनों खुद को समुद्री शक्तियों के रूप में देखते हैं, और इसका नतीजा ये है कि भारत- प्रशांत क्षेत्र में अपनी भूमिकाओं के लेकर उनके विज़न में कोई मेल नहीं है।[128] इसका समाधान ज़रूर निकाला जाना चाहिए। इससे हिंद महासागर क्षेत्र में शक्ति संतुलन और बीजिंग के लिए मौकों को तो नहीं बदला जा सकता, लेकिन यह भारत को नई परिस्थिति से निपटने में मदद करेगा, साथ ही चीन को भारत- अमेरिका के बढ़ते संबंधों से निपटने में मदद होगी। अभी ऐसा लगता है कि भारत-प्रशांत क्षेत्र के विचार को चीन के पूरी तरह खारिज करने के पीछे की वजह इसे चीन पर नियंत्रण से जोड़कर देखना है। ऐसी सोच बिलकुल वही है जो भारत को नाराज़ कर सकता है और इस धारणा को मज़बूती दे सकती है कि चीन के पास भारत को एक स्वतंत्र हस्ती के रूप में देखने का समय नहीं है। अगर बीजिंग को लगता है कि इस मसले पर भारत और चीन के बीच मतभेद को आसानी से तभी सुलझाया जा सकता है जब भारत बीआरआई को चीन के उत्थान के लिए सही नीयत की विकास रणनीति के तौर पर देखे और अपने भारत-प्रशांत क्षेत्र विज़न को छोड़ दे क्योंकि वह चीन पर नियंत्रण रखने की आक्रामक अमेरिकी रणनीति का हिस्सा है, तब इससे भारत में केवल इस दृष्टिकोण की पुष्टि हो सकती है कि चीन का मकसद भारत को साफ़ तौर पर प्रशांत क्षेत्र से बाहर करना, हिंद महासागर तक सीमित करना, और उस सीमित क्षेत्र में कथित प्रतिद्वंद्विता से निपटना है। इससे भारत- चीन संबंध में तनाव और बढ़ेगा।

गलवान से आगे का रास्ता

किसी भी पक्ष को दूसरे के इरादे और व्यवहार पर भरोसा नहीं है। दोनों ही दूसरे के कामों को गलत इरादे से किया बताते हैं और अपने कामों को अच्छे इरादे से जोड़ते हैं। ऐसा लगता है कि इससे भारतीय पक्ष में यह धारणा बन गई है कि चीन भारत की मुख्य चिंताओं के प्रति संवेदनशील नहीं है, यहां तक कि वह उनकी परवाह तक नहीं करता है, और चीनी पक्ष में यह धारणा है कि भारत के प्रति चीन की सद्भावना का जवाब भारत की तरफ से नहीं मिलता है। एक-दूसरे को समझाने की कोशिशों को खारिज करने की प्रवृत्ति यह भी दिखाती है कि अविश्वास गहरा है। नीयत और व्यवहार पर अविश्वास से परे एक और बड़ी वजह हो सकती है। ऐसा लगता है कि दोनों पक्षों में एक-दूसरे की पहचान को लेकर बनी धारणाएं बेमेल हैं। भारत को निराशा होती है क्योंकि चीन उसे क्षेत्रीय और वैश्विक प्रभाव वाले एक देश के रूप में उचित दर्जा नहीं देता है, हालांकि चीन सोचता है कि उसका रवैया भला है क्योंकि वह भारत को अपने लिए खतरे की तरह नहीं देखता है। बीजिंग की यह सोच भी हो सकती है कि अमेरिका के साथ उसके जीवन-मरण के संघर्ष से भारत अनुचित फायदा उठाने की कोशिश कर रहा है, हालांकि भारत अमेरिका के साथ घनिष्ठ संबंध कई वजहों से चाहता है जिनका चीन से कोई लेना-देना नहीं है। हो सकता है कि दोनों देश एक-दूसरे के अंदरूनी समीकरणों और राजनीतिक व्यवहार के बारे में एक ऐसी समझ के दायरे में कैद हों जो उन्होंने खुद से गढ़ रखी है।

यह विचार यी हैलिन ने भी व्यक्त किया है। वो दोनों पक्षों की पहचान और हैसियत की विरोधाभाषी समझ और व्याख्याओं के बारे में लिखते हैं। चीन और भारत के अपने-अपने अंतरराष्ट्रीय दर्जे पर अलग-अलग विचार हैं, एक-दूसरे की विकास रणनीतियों पर अलग-अलग धारणाएं हैं, और द्विपक्षीय संबंधों पर उनकी अलग-अलग नीतियों से मिलने वाले संभावित फायदों पर समझ में एक अंतर है। चीन को विश्वास है कि चीन- भारत संबंध एक ताक़तवर देश (चीन) और एक कम ताक़तवर देश (भारत) के बीच ऐसा संबंध है जिससे दोनों को फायदे हैं, जबकि भारत इसे दो समान रूप से शक्तिशाली देशों का ऐसा संबंध मानता है जिसमें एक पक्ष के फायदे का मतलब दूसरे पक्ष का उतना ही नुकसान है।[129]

इस बीच, अंतरा घोषाल सिंह ने लिखा है कि शायद २०१३—२०१५ के आसपास चीन ने भारत के साथ एक नए तरह के प्रमुख- शक्ति संबंध बनाने की कोशिश की थी। उनका तर्क है कि यह एक रणनीतिक समझौता था जो चीन ने अमेरिका- भारत के मज़बूत होते संबंध, विकासात्मक हितों के एक जैसे होने, और अपनी छवि दबंग के बजाय परोपकारी की बनाने जैसी वजहों से किया। हालांकि इस कोशिश ने दम तोड़ दिया क्योंकि मोदी सरकार के नेतृत्व में पहले से ज़्यादा आत्मविश्वासी, व्यावहारिक और सख्त भारत ने चीन के रणनीतिक आत्म-संतुलन और विवेक को चुनौती दी।[130] यह सही है कि चीन की विदेश नीति में भारत के साथ रिश्तों को एक नया महत्व मिल सकता था जब शी के नेतृत्व में पड़ोस कूटनीति को मज़बूती मिली, लेकिन अगर चीन एक नए तरीके का प्रमुख- शक्ति संबंध बनाना चाहता था, तो उसने भारत से बातचीन नहीं की। अगर चीन का इरादा परोपकार दिखाने और हितों के एक जैसे होने का प्रदर्शन करने की थी, तब अज़हर, न्यूक्लियर सप्लायर्स ग्रुप, और चीन- पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर जैसे गलत कदमों ने उस कोशिश पर पानी फेर दिया। अगर भारत- चीन संबंध में रणनीतिक समझौता केवल चीन की शर्तों पर होना है, तब चीन कितनी भी कोशिश कर ले, वो भारत को मनाने में कामयाब नहीं हो सकता।

दूसरी ओर, पहचान की समझ में अंतर इस बात को समझा सकता है कि विश्व मंच के केंद्र पर जाने की चीन की इच्छा की व्याख्या भारत अपनी हैसियत को घटाने के तौर पर क्यों करता है, जबकि चीन भारत- प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका के साथ भारतीय सहयोग पर उंगली क्यों उठाता है। इसके बाद यह सवाल उठेगा कि क्या दोनों गलतफहमियां बराबरी की हैं। चीन की वैश्विक महत्वाकांक्षा है और वो मौजूदा वैश्विक दबंग अमेरिका के साथ एक बड़ी प्रतिद्वंद्विता में लगा है।[131] भारत ना तो अमेरिका के साथ ऐसी किसी प्रतिद्वंद्विता में लगा है, और ना ही दुनिया पर दबदबा कायम करने की इसकी वैसी वैश्विक महत्वाकांक्षा है, जैसी चीन की है। इसलिए, भारत के साथ टकराव से चीन को भारत की तुलना में ज़्यादा नुकसान हो सकता है। चीन को इस बात पर सोचना ज़रूर चाहिए और भारत के बारे में अपनी समझ को बदलते हुए भारत को एक स्वतंत्र विदेश नीति वाली एक प्रमुख शक्ति के रूप में उचित दर्जा देना चाहिए। क्योंकि एक प्रतिकूल या विरोधी भारत चीन के उत्थान को और जटिल बना सकता है, खासकर मौजूदा वैश्विक परिदृश्य में जहां चीन को उन देशों की तरफ से ज़्यादा संदेह और प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा है जो मौजूदा अंतरराष्ट्रीय तंत्र को नियंत्रित करते हैं। सीधे शब्दों में कहें, अगर दोनों पक्ष अपनी-अपनी अलग धारणाओं का समाधान या प्रबंधन नहीं करते हैं तो दोनों को नुकसान हो सकता है, लेकिन चीन का नुकसान कहीं ज़्यादा बड़ा हो सकता है।

इस चुनौती का सारांश इस तरह हो सकता है: चीन को खुद से पूछना चाहिए कि क्या उसकी विदेश नीति में भारत-चीन रिश्तों के रणनीतिक और वैश्विक आयाम की कोई जगह नहीं है या वे इस हद तक कमज़ोर हो गए हैं कि द्विपक्षीय विवादों को महत्व दिया जा रहा है और इसका क्या असर चीन के उत्थान पर पड़ सकता है। भारत को खुद से पूछना चाहिए कि क्या दुनिया के समीकरण बदल रहे हैं, और क्या अपने मूल हितों से समझौता किए बगैर चीन के प्रति अपनी नीति में बदलाव की संभावना है।

निष्कर्ष

ऐसा लगता है कि दोनों राष्ट्र द्विपक्षीय संबंधों के सत्तरवें साल में एक चौराहे पर खड़े हैं। वे चार रास्तों में किसी एक पर जा सकते हैं: सशस्त्र टकराव जो नीचे की तरफ ले जाएगा; सशस्त्र सह-अस्तित्व; सहयोग और प्रतिद्वंद्विता के साथ सह-अस्तित्व, और साझेदारी। अभी साझेदारी की कोई संभावना नहीं दिखती। सशस्त्र टकराव एक बेवकूफी भरा कदम होगा क्योंकि इससे कम या ज़्यादा दोनों का ही नुकसान होगा। यह आशा की जाती

है कि चीन संपूर्ण विजय के सपने तो नहीं देखता है। सशस्त्र सह-अस्तित्व को सहयोग और प्रतिद्वंद्विता के साथ सह-अस्तित्व से जो चीज़ अलग करती है, वो है विश्वास। अभी विश्वास है नहीं। इस विश्वास को धीरे-धीरे बनाना होगा, और शुरुआत करनी होगी पूर्वी लद्दाख में वास्तविक नियंत्रण रेखा के साथ। चीन को ऐसे किसी ख्याल को अलग रखने के लिए तैयार रहना चाहिए कि सीमा विवाद को द्विपक्षीय संबंध से अलग करके विश्वास की बहाली हो सकती है।

राजीव गांधी – देंग शियाओपिंग सहमति खत्म हो चुकी है। अच्छे संबंध के लिए सीमा के सवाल बुनियादी हैं। यथास्थिति बहाल करने का चीन का संकेत मदद कर सकेगा। इसलिए, सीमा के पश्चिमी सेक्टर में पर्याप्त लिखित आश्वासन के साथ सेना की तैनाती कम करने पर काम किया जा सकता है। गतिरोध को दूर करने के लिए मौजूदा व्यवस्था का इस्तेमाल एक सकारात्मक कारक है। महत्वपूर्ण है कि दोनों पक्षों को स्वीकार्य समाधान की तलाश की जाए।

अगर पूर्वी लद्दाख में दोनों पक्षों को स्वीकार्य समाधान निकट भविष्य में संभव है, फिर दोनों पक्षों के सर्वोच्च नेतृत्व के लिए संबंधों को नए सिरे से शुरू करना संभव होना चाहिए। मोदी और शी एक-दूसरे को अच्छी तरह समझते हैं और एक-दूसरे का सम्मान करते हैं। उन्हें पहचान को लेकर गलतफहमियों पर बात करने और अपने-अपने दृष्टिकोण में सामंजस्य बनाने के संभावित तरीकों पर बात करने में सक्षम होना चाहिए। एक महत्वपूर्ण मुद्दा ये हो सकता है कि क्या चीन अपनी सीमा पर एक विरोधी भारत का खतरा उठा सकता है जब वो विश्व मंच के केंद्र पर जाना चाहता है और क्या भारत मल्टी-एलाइनमेंट (सभी प्रमुख शक्तियों को साथ लेकर चलना) के लिए एक दरवाज़ा (या दो दरवाज़े, क्योंकि रूस भी इसमें शामिल है) बंद करने का जोखिम उठा सकता है वो नीति उसके इतने काम आई है। खुलकर बातचीत के बाद मोटे तौर पर सहमति बनने से एक खाका बनाया जा सकता है जिससे रिश्तों की व्यापक समीक्षा का रास्ता खुल सकता है। अगर दोनों नेता इसे हासिल कर पाते हैं, फिर दोनों पक्षों के पास पर्याप्त अनुभव वाले राजनीतिक स्तर की हस्तियां हैं, जिनमें उनके राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (या समकक्ष) और विदेश मंत्री शामिल हैं, जो मोटे तौर पर बनी सहमति को नीति में बदल सकते हैं। समझ विकसित करने का, और, समय के साथ भरोसा बनाने का यही इकलौता रास्ता हो सकता है। इससे भी मदद मिल सकती है कि विशेष प्रश्नों का समाधान कार्यात्मक स्तरों पर निकाला जाए, जहां दोनों पक्षों के पास फैसले लेने और बातचीत की शैली के अलग-अलग तंत्र हैं, ताकि दोनों पक्ष केवल बातचीत ना करते रहें, उससे आगे भी बढ़ें।

द्विपक्षीय संबंधों में आगे के रास्ते पर बातचीत के लिए दोनों को ये समझने की भी ज़रूरत है कि चीज़ें बदल गई हैं।

1. दोनों पक्षों को पूर्वी लद्दाख में सेना का जमावड़ा बढ़ने का मुद्दा बराबर की गंभीरता से लेना चाहिए।

2. पूर्वी लद्दाख में मौजूदा गतिरोध के हल के बावजूद दोनों पक्ष लंबे समय तक सशस्त्र सह-अस्तित्व में रह सकते हैं। चूंकि दोनों पक्षों की सेनाएं तुलनात्मक रूप से संतुलित हो सकती हैं, यह दोनों के लिए फायदेमंद होगा कि १९९३ के बाद के समझौतों और सहमतियों पर वापस लौटें और उनमें सुधार करते रहें। वास्तविक नियंत्रण रेखा का स्पष्टीकरण इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

3. भारत ने बर्दाश्त से बाहर होते व्यापार असंतुलन का मुद्दा प्रमुखता से उठाया है लेकिन इस पर ध्यान नहीं दिया गया है।[132] चीन को भारत के साथ व्यापार घाटे के मुद्दे को हल करने पर काम करना होगा। वैसे भी, व्यापार को अलग केवल चुनिंदा जगहों पर ही किया जा सकेगा, उसी ढंग से और उन्हीं वजहों से, जो चीन ने अमेरिका के साथ अलग करने के लिए चुनी हैं। दोनों अर्थव्यवस्थाओं के आकार को देखते हुए, एक संतुलित व्यापारिक और आर्थिक संबंध भविष्य के रिश्तों के लिए एक मज़बूत बुनियाद रख सकता है।

4. खुली बातचीत के माध्यम से एक- दूसरे के क्षेत्रीय कदमों की बेहतर समझ विश्वास बनाने के लिए महत्वपूर्ण है। भारत- प्रशांत क्षेत्र विज़न भारत के लिए विकास से जुड़ी उतनी ही बड़ी ज़रूरत है, जितनी बीआरआई शायद चीन के लिए है। विश्वास बनाने के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्रों – दक्षिण एशिया और उत्तरी हिंद महासागर और पूर्वी एशिया और पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र – में एक-दूसरे के इरादों पर खुली बातचीत होनी चाहिए, और साथ ही पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र और उत्तरी हिंद महासागर में एक-दूसरे की खास हैसियत का सम्मान करना चाहिए।

5. दोनों पक्षों को अहम साझेदारियों पर दूसरे पक्ष के तर्कसंगत हितों को समायोजित करने की ज़रूरत होगी: चीन की पाकिस्तान के साथ और भारत की अमेरिका के साथ साझेदारी। हो सकता है कि ये पसंद ना आए, लेकिन मौजूदा परिस्थितियों में दोनों ही पक्ष अपने सहयोगियों को नहीं छोड़ेंगे, और भारत और चीन दोनों चिंता के मुख्य बिंदुओं पर एक अस्थायी समझौते (मोडस विवेंडी) के माध्यम से बात कर सकते हैं।

6. भारत की बहुपक्षीय आकांक्षाओं को चीन ने अभी तक मान्यता नहीं दी है। अगर चीन भारत की भूमिका को स्वीकार करता है, तो दोनों पक्षों के लिए वैश्विक स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन से लेकर नई तकनीक में मानक स्थापित करने जैसे कई मुद्दों पर सहयोग की बड़ी संभावना है। यह सुनिश्चित करना भी भारत के हित में है कि डिजिटल क्रांति के नियम सिर्फ उनके द्वारा ना लिखे जाएं जिन्होंने पिछली दो सदियों में दुनिया पर दबदबा रखा है।

7. चीन पर लोगों का भरोसा तेज़ी से गिरा है और थोड़े समय के लिए इसके वापस जमने की संभावना नहीं है। भारतीय लोग मानते हैं कि चीन ने भारत को धमकाने के लिए महामारी का फायदा उठाया। लोगों का भरोसा फिर से जीतने के तरीकों की पहचान करनी होगी।

आगे बढ़ने की संभावनाएं इस बात पर निर्भर करेंगी कि चीन और भारत लद्दाख संकट से क्या सबक लेते हैं। अगर चीनी रणनीतिक विशेषज्ञ मानते हैं कि मौजूदा अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में भारत-चीन संबंधों के ठीक होने की खास संभावना नहीं है और यह कि भारत पहले से ही अमेरिका का अर्ध- सहयोगी है, तो द्विपक्षीय मतभेदों को संभालना मुश्किल हो सकता है और ज़्यादा हिंसक टकराव का वक्त आ सकता है।[133] अगर भारतीय रणनीतिक विशेषज्ञ मानते हैं कि बीजिंग भारत को धमकाने या नीचा दिखाने पर आमादा है क्योंकि व्यापक राष्ट्रीय शक्ति में चीन की श्रेष्ठता उसे सीमा रेखा को स्थायी रूप से नए सिरे से खींचने की या भारत की वैश्विक या क्षेत्रीय हैसियत को स्थायी रूप से नुकसान पहुंचाने की अनुमति देती है, तब भी, हालात टकराव वाले बन सकते हैं।

दूसरी तरफ, अगर चीनी रणनीतिक समुदाय भारत के प्रति अपने रुख का फिर से मूल्यांकन करता है, और अगर चीन स्वीकार करता है कि भारत को लेकर उसकी नीति में भारत की नई वास्तविकताओं को पूरी तरह शामिल नहीं किया गया है और साथ में अपने उत्थान को सुविधाजनक बनाने या बाधा खड़ी करने में क्षेत्र में भारत की अहमियत को मानता है, तब संबंध के लिए एक नया आधार बन सकता है। दोनों देश एक चौराहे पर खड़े हैं, और यह सहयोग और प्रतिस्पर्धा के सह-अस्तित्व का रास्ता चुनने का आखिरी मौका हो सकता है। अगर ऐसा नहीं होता है तो विरोधी प्रतिद्वंद्विता का एक नया दौर शुरू हो सकता है, जिसमें दोनों देश संभावित टकराव में उलझ सकते हैं क्योंकि हिंद महासागर क्षेत्र में चीन की रणनीतिक परिधि का सीधा टकराव भारत के रणनीतिक दायरे से है।

लेखक का परिचय

विजय गोखले कार्नेगी इंडिया में एक नॉन-रेसिडेंट सीनियर फेलो हैं और भारत के पूर्व विदेश सचिव (२०१८—२०२०) हैं। इसके पहले, वो २०१० से २०१३ तक मलेशिया में भारत के उच्चायुक्त के रूप में, २०१३ से २०१६ तक जर्मनी में राजदूत के रूप में, और २०१६ से २०१७ तक चीन में राजदूत के रूप में सेवाएं दे चुके हैं। उन्होंने चीनी राजनीति और कूटनीति पर विशेष ध्यान देते हुए भारत- प्रशांत क्षेत्र से जुड़े मामलों पर काफी काम किया है। विदेश सेवा से अपनी सेवानिवृत्ति के बाद से, गोखले ने *दि न्यूयॉर्क टाइम्स, दि हिंदू* और *दि इंडियन एक्सप्रेस* में अपनी राय व्यक्त करते हुए कई लेख लिखे हैं।

नोट्स

1 Aparna Banerjea, "India-China Border Clash: 20 Indian Soldiers Killed, Confirms Army," *Livemint*, June 16, 2020, https://www.livemint.com/news/india/india-china-border-clash-at-least-20-indian-soldiers-killed-confirms-army-11592325205852.html.

2 Brahma Chellaney, "A Tipping Point in the Himalayas," *Hindustan Times*, June 10, 2020, https://www.hindustantimes.com/columns/for-india-a-tipping-point-with-china/story-6hwPN84esqFFpWPssRn3yM.html.

3 Hu Shisheng and Wang Jue, "The Behavioural Logic of India's Tough Foreign Policy Towards China," *China International Relations* 30, no. 5 (September–October 2020): 37–65.

4 Ibid.; and Shivshankar Menon, "What China Hopes to Gain From the Present Border Standoff With India," *Wire*, December 3, 2020.

5 On the damaging impact of the Galwan clash, see: Shivshankar Menon, "India-China Ties: the Future Holds 'Antagonistic Cooperation', Not War," *Wire*, December 7, 2020, https://thewire.in/external-affairs/india-china-ties-expect-antagonistic-cooperation-future-not-war; Nayanima Basu, "'Most difficult phase' — Jaishankar Says India-China Ties 'Significantly Damaged' This Year," *Print*, December 9, 2020, https://theprint.in/diplomacy/most-difficult-phase-jaishankar-says-india-china-ties-significantly-damaged-this-year/563425/; Outlook Staff, "Modi Delivers Stern Message to China at SCO Summit; Says Need to Respect Sovereignty, Territorial Integrity," *Outlook*, November 10, 2020, https://www.outlookindia.com/newsscroll/modi-delivers-stern-message-to-china-at-sco-summit-says-need-to-respect-sovereignty-territorial-integrity/1973847; Manoj Joshi, "There Is an Answer to Modi's Enigma on Galwan," Observer Research Foundation, June 24, 2020, https://www.orfonline.org/expert-speak/there-is-an-answer-to-modis-enigma-on-galwan-68411/.

6 "India-China Joint Press Communique," Ministry of Foreign Affairs, People's Republic of China, December 23, 1988, https://www.fmprc.gov.cn/mfa_eng/wjdt_665385/2649_665393/t15800.shtml.

7 Nitin Gokhale, *R.N.Kao – Gentleman Spymaster* (New Delhi: Bloomsbury, 2019), 218–9.

8 Vepula Ramanujam and Manish S. Dabhade, "Rajiv Gandhi's Summit Diplomacy: A Study of the Beijing Summit, 1988," *China Report* 55, no. 4 (2019): 310–327.

9 Ibid.

10 Sumit Ganguly, "The Sino-Indian Boundary Talks: A View From New Delhi," *Asian Survey* 29, no. 12 (1987): 1128–32; Manoranjan Mohanty, "India-China Relations: A Positive Frame," *India Quarterly* 41, no. 1 (1985): 21; Ramesh Thakur, "Normalizing Sino-Indian Relations," *Pacific Review* 4, no. 1 (1991): 10–13.

11 The Bofors deal had eroded the public approval of the Rajiv Gandhi administration with allegations of bribery being levyed against his government. As a consequence, a major foreign policy was sought to improve the government's image; Ganguly, "Sino-Indian Boundary Talks," 1132; Abhijit Ghosh, "Dynamics of India-China Normalization," *China Report* 31, no. 2 (1995): 257.

12 Ganguly, "Sino-Indian Boundary Talks," 1126; Ghosh, "Dynamics of India-China Normalization," 252.

13 Abu Taher Salahuddin Ahmed, "India-China Relations in the 1990s," *Journal of Contemporary Asia* 26, no. 1 (1995): 110; Ghosh, "Dynamics of India-China Normalization," 270.

14 Alka Acharya, "China," in *The Oxford Handbook of Indian Foreign Policy*, eds. C. Raja Mohan and Srinath Raghavan (New Delhi: Oxford University Press, 2015): 261–9.

15 Kanti Bajpai, "India-China: Shadow of the Future," *Seminar*, no. 629 (January 2012); Acharya, "China," 266–7.

16 Zheng Ruixiang, "Shifting Obstacles in Sino-Indian Relations," *Pacific Review* 6, no. 1 (1993): 63–70.

17 Acharya, "China," 261–9; John W. Garver, *Protacted Contest: Sino-Indian Rivalry in Twentieth Century* (Seattle: University of Washington Press, 2001): 385; G.P. Deshpande and Alka Acharya, "Talking of and with China," *Economic and Political Weekly* 38, no. 28 (Jul. 12–18, 2003): 2940–2.

18 Cheng Ruisheng, "Enhancing Mutual Trust Between India and China," *China International Studies* 21, no. 140 (2010): 140–50.

19 Shyam Saran, "China in the Twenty-First Century: What India Needs to Know about China's World View, World Affairs," *Journal of International Issues* 18, no. 2 (April–June 2014): 165–7.

20 Saran, "China in the Twenty-First Century," 156–68.

21 "Debate: India China Relations: Conflicting Trends," *Indian Foreign Affairs Journal* 9, no. 1 (January–March 2014): 1–22; Acharya, "China," 261–9; Bajpai, "India-China: Shadow of the Future."

22 Yan Xuetong, "From Keeping a Low Profile to Striving for Achievement," *Chinese Journal of International Politics* 7, no. 1 (Summer 2014): 153–84; Wang Jisi, "China's Search for a Grand Strategy," *Foreign Affairs*, March/April 2011.

23 Xu Jian, "China's Major Country Diplomacy and Sino-Indian Relations," *China International Studies* 70, no. 37 (2018): 41–42.

24 Wu Xinbo, "Understanding the Geopolitical Implications of the Financial Crisis," *Washington Quarterly* 33, no. 4 (2010): 155–63; Chengde, "Global Financial Crisis and Changing Structure of World Forces," 18–39.

25 Xuetong, "From Keeping a Low Profile to Striving for Advancement," 153–184; Dingding Chen and Jianwei Wang "Lying Low No More? China's New Thinking on the Tao Guang Yang Hui Strategy," *China: An International Journal* 9, no. 2 (September 2011): 195-216; Dong Wang, "Is China Trying to Push the U.S. Out of East Asia?," *China Quarterly of International Strategic Studies* 1, no. 1 (2015): 65–71.

26 Dingding Chen and Jianwei Wang, "Lying Low No More? China's New Thinking on the Tao Guang Yang Hui Strategy," *China: An International Journal* 9, no. 2 (September 2011): 195–216.

27 See Wang Jisi, "China's Changing Role in Asia," Atlantic Council and Chinese Academy of Social Sciences, 5.

28 Xuetong, "From Keeping a Low Profile to Striving for Advancement," 153–84.

29 Wang Jisi, "China's Search for a Grand Strategy," *Foreign Affairs*, March/April 2011, https://www.foreignaffairs.com/articles/china/2011-02-20/chinas-search-grand-strategy.

30 Kejin Zhao and Xin Gao, "Pursuing the Chinese Dream: Institutional Changes of Chinese Diplomacy Under President Xi Jinping," *China Quarterly of International Strategic Studies* 1, no. 1 (2015): 35–57.

31 Xi Jinping, "Let the Sense of Community of Common Destiny Take Deep Root in Neighbouring Countries" (speech, Conference on the Diplomatic Work with Neighbouring Countries, Beijing, October 23, 2015).

32 Zhou Jianren, "Power Transition & Paradigm Shift in Diplomacy: Why China and the US March towards Strategic Competition?," *Chinese Journal of International Politics* 12, no.1 (Spring 2019): 1–34.

33 Xuetong, "From Keeping a Low Profile to Striving for Advancement," 70.

34 Wu Xinbo, "A New Landscape in China-U.S. Relations," *China International Studies* 14 (2009): 28–45; Yan Xuetong, "The Instability of China–US Relations," *Chinese Journal of International Politics* 3, no. 3 (Autumn 2010): 263–292.

35 Yan Xuetong and Qi Haixia, "Football Game Rather Than Boxing Match: China–US Intensifying Rivalry Does Not Amount to Cold War," *Chinese Journal of International Politics* 5, no. 2 (Summer 2012): 106.

36 Jian, "China's Major-Country Diplomacy and Sino-Indian Relations," 37–52; Muhammed Saeed, "From Asia-Pacific to the Indo-Pacfic: Expanding Sino-US Strategic Competition," *China Quarterly of International Strategic Studies* 3, no. 4 (2017): 499–512.

37 Chen and Pu, "Debating China's Assertiveness," 176–183.

38 Zheng Ruixiang, "China-India Relations: Course of Development and Prospects," *China International Studies* 25 (2010): 152–170.

39 Jian, "China's Major-Country Diplomacy and Sino-Indian Relations," 37–52; Ruixang, "China-India Relations," 152–70.

40 See CICR Research Group, "Chinese Major-Country Diplomacy," *China International Studies* 30, no. 2 (2019): 34–36; Liu Jianfei, "Major-Country Diplomacy with Chinese Characteristics Reflects Trends of the Times," *China International Studies* 64 (2017): 28–44.

41 CICR Research Group, "Chinese Major-Country Diplomacy," 36–38.

42 Jabin T. Jacob, "China's Belt and Road Initiative: Perspectives from India," *China and the World Economy* 25, no. 5 (2017): 80.

43 Sutirtho Patronobis, "India to Attend Belt and Road Forum in Beijing, Says China," *Hindustan Times*, May 11, 2017, https://www.hindustantimes.com/world-news/india-to-attend-belt-and-road-forum-in-beijing-says-china/story-snbk416L5P7cbWLTsd4y1I.html.

44 Manoj Joshi, "Depsang Incursion: Decoding The Chinese Signal," Observer Research Foundation, May 14, 2013, https://www.orfonline.org/research/depsang-incursion-decoding-the-chinese-signal/.

45 C. Raja Mohan, "Foreign Policy After 1990: Transformation Through Incremental Adaption," in *The Oxford Handbook of Indian Foreign Policy*, eds. C. Raja Mohan and Srinath Raghavan (New Delhi: Oxford University Press, 2015), 105–13.

46 Sunil Khilnani et al. *Non-Alignment 2.0: A Foreign and Strategic Policy for India in the Twenty First Century* (New Delhi: Centre for Policy Research, 2016): 8.

47 On multi-alignment, see: M.K. Narayan, "Non-alignment to Multi-Alignment," *Hindu*, January 5, 2015; Atul Bhardwaj, "Modi's Multi-Alignment and Nehru's Non-Alignment," *Economic and Political Weekly* 55, no. 4 (2020); P.S. Raghavan, "The Making of India's Foreign Policy: From Non-Alignment to Multi-Alignment," *Indian Foreign Affairs Journal* 12, no. 4 (2017): 326–341; Rajesh Basrur, "Modi's Foreign Policy Fundamentals: A Trajectory Unchanged," *International Affairs* 93, no. 1 (2017): 9.

48 Raja Mohan, "Foreign Policy After 1990," 105–13.

49 "Agreement Between the Government of the Republic of India and the Government of the People's Republic of China on the Political Parameters and Guiding Principles for the Settlement of the India-China Boundary Question," Ministry of External Affairs, Government of India, April 11, 2011, https://mea.gov.in/bilateral-documents.htm?dtl/6534/Agreement+between+the+Government+of+the+Republic+of+India+and+the+Government+of+the+Peoples+Republic+of+China+on+the+Political+Parameters+and+Guiding+Principles+for+the+Settlement+of+the+IndiaChina+Boundary+Question.

50 "Joint Statement of the Republic of India and the People's Republic of China," Ministry of External Affairs New Delhi, Government of India, April 1, 2005, https://www.mea.gov.in/bilateraldocuments.htm?dtl/6577/Joint+Statement+of+the+Republic+of+India+and+the+Peoples+Republic+of+China.

51 Shivshankar Menon, *Choices: Inside the Making of Indian Foreign Policy* (New Delhi: Penguin, 2017): 27.

52 Prem Shankar Jha, "China-India Relations Under Modi; Playing with Fire," *China Report* 53, no. 2 (2017): 158–71.

53 Rajshree Jetly, "India and China: Emerging Dynamics and Regional Security Perspectives," Institute for South Asian Studies, National University of Singapore, Working Paper no. 114, September 2010.

54 Brahma Chellaney, "Rising Powers Rising Tensions: The Troubled India-China Relationship," in *SAIS Review of International Affairs* 32, no. 2 (Summer-Fall 2012): 99–108.

55 Shivshankar Menon, "Some Thoughts of India, China and Asia-Pacific Security," in *China Report* 53, no. 2(2017): 188–213; Shyam Saran, "China in the Twenty First Century World Affairs," in *Journal of International Issues* 18, no. 2 (Summer 2014): 156–68; and Harsh Pant, "The India-US-China Triangle from New Delhi: Overcoming the 'Hesitations of History," *India Review* 18, no. 4 (2019): 386–406.

56 At the Asian Relations Conference in 1947, Nehru referred to China as "that great country to which Asia owes so much and from which so much is expected." See Ramchandra Guha, "Jawaharlal Nehru & China: A Study in Failure," Harvard-Yenching Institute, Working Papers Series, March 2011.

57 On India's support to China in the UN, see: Tanvi Madan, *Fateful Triangle: How China Shaped U.S.-India Relations during the Cold War* (Washington, DC: Brookings Institution, 2019), 17–45.

58 Pan Jingguo, Literature Research Office of the CPC Central Committee, Contemporary History Studies, Chinese Lib. Clas. No. D829-351; Doc ID Code: A 1005 4952(2008) 01-0097-09.

59 "Memorandum of Conversation between President Nixon and Premier Zhou Enlai, Peking, February 21, 1972," from *The White House & Pakistan – Secret Declassified Documents 1969-1974*, edited by F.S. Aijazuddin (Karachi: Oxford University Press, 2002).

60 Deng Xiaoping said: "No genuine Asia-Pacific century or Asian century can come until China, India and other neighbouring countries are developed." See Deng Xiaoping, "A New International Order Should be Established with the Five Principles of Peaceful Coexistence as Norms," December 21, 1988, in *The Selected Works of Deng Xiaoping*, volume 3.

61 Kamal Sheel, "China's Changing Discourse on India," *Seminar*, no. 587 (2007); Wang Shida, "The Powerful Rise of Hindu Nationalism and its Impact," *China International Relations* 30, no. 3 (2020): 57–75.

62 Shen Zhihua, "On Learning the Scholar's Craft: Reflections of Historians and International Relations Scholars," Humanities and Social Sciences Online, H-Diplo Essay 267, September 2020.

63 "Memorandum of Conversation between President Nixon and Premier Zhou Enlai, Peking, February 21, 1972," from *The White House & Pakistan – Secret Declassified Documents 1969-1974*, edited by F.S. Aijazuddin (Karachi: Oxford University Press, 2002).

64 Mao Zedong, "On the People's Democratic Dictatorship: In Commemoration of the Twenty Eighth Anniversary of the Communist Party of China, June 30, 1949," from the History and Public Policy Program Digital Archive, Wilson Center, translation from *Selected Works of Mao Tse-tung*, volume 4 (Peking: Foreign Languages Press, 1961), 411–23, https://digitalarchive.wilsoncenter.org/document/119300.

65 PTI, "India Refuses to Endorse China's Belt and Road Initiative," *Hindu*, June 10, 2018; and Shi Hongyuan, "The Indian Ocean Policy of the Modi Government," *China International Studies* 69 (2018): 112.

66 Ye Hailin, "The Influence of Identity Perception Bias on India-China Relations," China-India Dialogue, November 2020.

67 See CICR Research Group, "Chinese Major-Country Diplomacy," 36–8; Jianfei, "Major-Country Diplomacy with Chinese Characteristics," 28–44.

68 Ling Shengli, "Building a Community of Common Security: China's Approach to Its Neighborhood," *China International Studies* 68 (2018): 44–67; Jian, "China's Major-Country Diplomacy and Sino-Indian Relations," 38–41.

69 Jian, "China's Major-Country Diplomacy and Sino-Indian Relations," 41–43; Zhang Jie, "The Quadrilateral Security Dialogue and Reconstruction of Asia-Pacific Order," *China International Studies* 74 (2019): 55–73.

70 Shengli, "Building a Community of Common Security," 44–67.

71 Ruisheng, "Enhancing Mutual Trust Between India and China," 140–50.

72 Cheng Ruisheng, "Enhancing Mutual Trust Between India and China," *China International Studies* 21, no. 140 (2010): 140–50.

73 Jacob, "China's Belt and Road Initiative: Perspectives from India," 78–100.

74 Shisheng and Jue, "The Behavioural Logic of India's Tough Foreign Policy," 37–65.

75 Hu Shisheng dubbed Modi's Neighborhood First policy as the "Monroe Doctrine in South Asia," claiming that it "collided head-on" with China's One Belt One Road Initiative. See Hu Shisheng, "The Behavioural Logic of India's Tough Foreign Policy Towards China," *China International Relations* (September/October 2020): 37–65.

76 Ruisheng, "Enhancing Mutual Trust Between India and China," 141–44.
77 Lan Jiaxue, "Indian Diplomacy and the New Era of Sino-Indian Relations," *China International Studies* 51, no. 111 (2015): 111–28.
78 Shida, "The Powerful Rise of Hindu Nationalism and its Impact," 57–75; Lou Chunhao, "India's Foreign Policy Re-Orientation in Modi's Second Term and Future Prospects," *China International Relations* 29, no. 3 (September 2019): 107–33.
79 C.P. Chung, "What Are the Strategic and Economic Implications for South Asia of China's Maritime Silk Road Initiative?," *Pacific Review* 31, no. 3 (2017): 1–18; Hongyuan, "The Indian Ocean Policy of the Modi Government," 86–112.
80 Hongyuan, "The Indian Ocean Policy of the Modi Government," 86–112.
81 Rong Ying, "The Modi Doctrine & the Future of India-China Relations," *China International Studies*, no. 26 (2018): 26–43.
82 Chunhao, "India's Foreign Policy Re-Orientation in Modi's Second Term," 107–33; Shisheng and Jue, "The Behavioral Logic of India's Tough Foreign Policy," 41–44.
83 Rong Ying, "The Modi Doctrine & the Future of India-China Relations," *China International Studies* 68, no. 26 (2018): 26–43.
84 Chunhao, "India's Foreign Policy Re-Orientation in Modi's Second Term," 17–130; Shisheng and Jue, "The Behavioral Logic of India's Tough Foreign Policy," 41–51; Ying, "The Modi Doctrine & the Future of India-China Relations," 26–43.
85 Ananth Krishnan, "China's Foreign Minister Says U.S. Using Quad to Build 'Indo-Pacific NATO'," *Hindu*, October 13, 2020, https://www.thehindu.com/news/international/china-fm-calls-us-indo-pacific-strategy-a-huge-security-risk/article32844084.ece.
86 Shyam Saran, "Xi Jinping's Deng Moment," *Business Standard*, November 19, 2013, https://www.business-standard.com/article/opinion/shyam-saran-xi-jinping-s-deng-moment-113111901199_1.html; R.S. Kalha, "Taking Stock of Chinese Leader Xi Jinping's One Year Rule," IDSA Comment, Institute for Defence Studies and Analyses, New Delhi, 2013; Suthirtho Patranobis, "Xi Jinping: The New Face of China," *Hindustan Times*, November 9, 2012; "Debate: India China Relations: Conflicting Trends," *Indian Foreign Affairs Journal* 9, no. 1 (January–March 2014): 1–22.
87 "Debate: India China Relations," 1–22; Acharya, "China," 261–9; Bajpai, "India-China: Shadow of the Future"; Srikanth Kondapalli, "Leadership Change in China: Portends for the Future," *Indian Foreign Affairs Journal* 7, no. 2 (2012): 156–65.
88 "Debate: India China Relations," 1–22.
89 Jacob, "China's Belt and Road Initiative: Perspectives From India," 78–100; Harsh V. Pant and Ritika Passi, "India's Response to China's Belt and Road Initiative," *Asia Policy*, no. 24 (2017): 88–89.
90 Thorsten Wojczewski, "China's Rise as a Strategic Challenge and Opportunity: India's China Discourse and Strategy," *India Review* 15, no. 1 (2016): 27–28.
91 Jacob, "China's Belt and Road Initiative: Perspectives from India," 78–100; Richard W. Hu, "China's 'One Belt One Road' Strategy: Opportunity or Challenge for India?," *China Report* 53, no. 2, (2017): 1–18; Sumit Ganguly and Andrew Scobell, "The Himalayan Impasse: Sino-Indian Rivalry in the Wake of Doklam," *Washington Quarterly* 41, no. 3 (2018): 182.
92 Sutirtho Patranabis, "'New Solutions Needed': China on Widening Trade Deficit With India," *Hindustan Times*, 2019.
93 The Five-Year Trade and Economic Development Plan signed in the presence of both leaders.
94 "The Powerful Rise of Hindu Nationalism and its Impact," *China International Relations* 30, no. 3 (2020), 57–75; and Hu Shisheng and Wang Jue, "The Behavioural Logic of India's Tough Foreign Policy Towards China," *China International Relations* 30, no. 5 (September–October 2020): 37.

95 Shyam Saran, "Changing Dynamics in India-China Relations," *China Report* 53, no. 2 (2017): 259–63.

96 जून 2017 में, चीनी सेना ने चीन और भूटान की सीमा पर स्थित बटांग ला रिज से डोकलाम (डोलाम) पठाकर होते हुए ग्येमोचेन तक भारी वाहन चलाने लायक सड़क का निर्माण करना शुरू किया। भारतीय सशस्त्र बलों ने भारत- भूटान- चीन सीमा के ट्राईजंक्शन (तीन देशों की सीमा जहां मिलती है) बिंदु को इकतरफा तरीके से तय करने से चीनी सेना को रोकने के लिए कार्रवाई की। गतिरोध अंत में शांतिपूर्वक सुलझा लिया गया।

97 Menon, "Some Thoughts of India, China and Asia-Pacific Security," 188–213.

98 Pant, "The India-US-China Triangle from New Delhi," 386–406.

99 Wojczewski, "China's Rise as a Strategic Challenge," 22–60.

100 Ganguly and Scobell, "Sino-Indian Rivalry in the Wake of Doklam," 186–7; Pant, "The India–US– China triangle from New Delhi: overcoming," 396–8.

101 Debashish Roychowdhury, "Between the Lines: Indian Media's China War," *China Report* 51, no. 3 (2015): 169–203

102 Qiang Zhai, "1959: Preventing Peaceful Evolution," *China Heritage Quarterly*, June 2009, http://www.chinaheritagequarterly.org/features.php?searchterm=018_1959preventingpeace.inc&issue=018.

103 Bo Yibo, "Memoirs, Chinese Finance Minister Bo Yibo, Excerpt on Preventing 'Peaceful Evolution,'" History and Public Policy Program Digital Archive, translated from *Recollections of Several Important Political Decisions and Their Implementation* (Beijing: Zhonggong zhongyang dangxiao chubanshe, 1991), https://digitalarchive.wilsoncenter.org/document/117029.

104 Zhao Gacheng, "China-US-India: Is a New Triangle Taking Shape?," *China Quarterly of International Strategic Studies* 2, no. 1 (2016): 1–16.

105 Yang Xiaoping "Managing Leadership in Indo-Pacific: The US's Asia Strategy Revisited," *China Quarterly for International Strategic Studies* 3, no. 4 (2017): 463–80.

106 Li Jiacheng, "Developing China's Indian Ocean Strategy: Rationale & Prospects," *China Quarterly of International Strategic Studies* 3, no. 4 (2017): 481–97.

107 Jiacheng, "Developing China's Indian Ocean Strategy: Rationale & Prospects," 481–97.

108 Liu Zhongyi, "India's Political Goals Hinder Cooperation With China on 'Belt, Road'," *Global Times*, June 3, 2016, https://www.globaltimes.cn/content/992047.shtml; Jie, "The Quadrilateral Security Dialogue," 60–73.

109 Xiaoping, "Managing Leadership in the Indo-Pacific," 463–80.

110 Ibid: 477–8.

111 Zhang Xiaotong and Colin Flint, "Historical – Geopolitical Contexts and the Transformation of Chinese Foreign Policy," in *Chinese Journal of International Politics* 12, no. 2 (2019): 295–331.

112 Jie, "The Quadrilateral Security Dialogue," 60–73

113 Minghao Zhao, "Is a New Cold War Inevitable? Chinese Perspectives on US-China Strategic Competition," in *Chinese Journal of International Politics* 12, no. 3 (2019): 1–24.

114 Zhao Gacheng, "China-US-India: Is a New Triangle Taking Shape?," in *China Quarterly of International Strategic Studies* 2, no. 1 (2016): 1–16.

115 Jie, "The Quadrilateral Security Dialogue," 60–73; Zhao, "China-US-India: Is a New Triangle Taking Shape?," 1–16.

116 Yan Xuetong, *Leadership and the Rise of Great Powers* (Princeton, NJ: Princeton University Press, 2019).

117 Chen Xiangyang, "World View: The Future of International Situation in Year 2021," *Ban Yue Tan* (January 2021).

118 See Jiacheng, "Developing China's Indian Ocean Strategy," 487–90; Xiaoping, "Managing Leadership in the Indo-Pacific," 463–80; Hongyuan, "The Indian Ocean Policy of the Modi Government," 86–112.

119 Hailin, "The Influence of Identity Perception Bias on India-China Relations"; and Liu Minwang, "A New Crossroads in Sino-Indian Relations," Pangoal Institution, October 2020.

120 Zhang Jiadong, "Are US and India Already in Quasi-Military Alliance?," *Huanqiu Shibao*, October 30, 2020.

121 Zhao, "Is a New Cold War Inevitable?," 1–24.
122 C. Raja Mohan, *Samudra Manthan: Sino-Indian Rivalry in the Indopacific* (Washington, DC: Carnegie Endowment For International Peace, 2012): 64.
123 Pant, "The India-US-China Triangle from New Delhi," 386–406.
124 Harsh V. Pant, "Sino-Indian Maritime Ambitions Collide in the Indian Ocean," in *Journal of Asian Security and International Affairs* 1, no. 2 (2014): 187–201.
125 Ganguly and Scobell, "Sino-Indian Rivalry in the Wake of Doklam," 180–1.
126 Tanvi Madan, "The Rise, Fall and Rebirth of Quad," *War on the Rocks*, November 16, 2017, https://warontherocks.com/2017/11/rise-fall-rebirth-quad/; Kevin Rudd, "The Convenient Re-Writing of the History of the 'Quad'," *Nikkei Asia*, May 26, 2019, https://asia.nikkei.com/Opinion/The-Convenient-Rewriting-of-the-History-of-the-Quad.
127 Raja Mohan, *Samudra Manthan.*
128 Sumit Ganguly and Andrew Scobell, "The Himalayan Impasse – Sino-Indian Rivalry in the Wake of Doklam," in *Washington Quarterly* 41, no. 3 (2018): 177–90.
129 Ye Hailin, "How Much Do China and India Differ in Their Self-Understanding and Perception of the Other," *China-India Dialogue*, November 2020.
130 Antara Ghoshal Singh, "Starting High Ending Low," *Seminar*, no. 728, April 2020.
131 Xi has said that by 2049 China seeks to move closer to the center of the world's stage.
132 Chung, "Strategic and Economic Implications for South Asia of China's Maritime Silk Road," 13; Acharya, "China," 265–6; Sumit Ganguly and Surupa Gupta, "Why India Refused to Join the World's Biggest Trading Bloc," *Foreign Policy*, November 23, 2020, https://foreignpolicy.com/2020/11/23/why-india-refused-to-join-rcep-worlds-biggest-trading-bloc/.
133 Antara Ghoshal Singh, "The Standoff and China's India Policy Dilemma," *Hindu*, July 15, 2020.

Unit C-5 & 6 | Edenpark | Shaheed Jeet Singh Marg | New Delhi, India 110016 | P: +011 4008687

CarnegieIndia.org